पांडव भी मत्स्य, त्रिगर्त, पांचाल और कीचक जनपद छोड़कर आगे बढ़ गये। पांडव जटाधारी मृगचर्म पहने तपस्वी वेष में रहते थे। इसी बीच पांडवों को व्यास जी मिले और वे उन्हें सांत्वना देकर एकचक्रा नगरी के एक ब्राह्मण के घर में ठहरा दिये और एक मास के बाद पुनः मिलने का आश्वासन देकर चले गये (-)।

मीमांसा

घटोत्कच-घट (सिर), उत्कच (ऊपर उठे हुए बाल) अथवा उत (रहित) कच (बाल)। अर्थात घटोत्कच वह है जिसके सिर के बाल ऊपर उठे हैं अथवा जिसके सिर में बाल नहीं हैं।

. भीम द्वारा बक-वध

पांडव ब्राह्मण-वेष में रहते थे। भिक्षा करके भोजन लाते थे! भोजन का आधा भीम खाते थे और आधे में चारों पांडव और कुंती। एक दिन उस घर में रोने की आवाज आयी। कुंती ने कारण पूछा तो पता चला कि नगर से दो कोस दूर पर एक बक नाम का राक्षस गुफा में रहता है। उसके भोजन के लिए नगर में एक-एक घर से क्रमशः पारी बंधी है। प्रतिदिन पारी वाले घर से बीस खारी अगहनी चावल का भात, दो भैंसे और एक मनुष्य उसके पास भेजे जाते थे। उस दिन उसी ब्राह्मण के यहां पारी थी। इसलिए उस घर में रोना-पीटना मचा था।

कुंती ने ब्राह्मण को सांत्वना दी और कहा कि मेरा पुत्र भीम बक के पास भोजन लेकर जायेगा और उसको मारकर आयेगा। अंततः भीम ने जाकर बक को मार दिया। यह जानकर नगरवासी प्रसन्न हुए। लोगों ने सोचा कि भाई, कौन ऐसा बलवान है जो बक को मार डाला। आज उसे भोजन देने की पारी ब्राह्मण की थी, उससे पता चलेगा। ऐसा सोचकर लोग ब्राह्मण के घर आये और इस बात को पूछे, तो ब्राह्मण ने पांडवों को छिपाते हुए कहा कि एक मंत्रसिद्ध किसी ब्राह्मण ने बक राक्षस को मार डाला है (अध्याय -)।

मीमांसा

जैसे नाच-नाटक में बीच-बीच में जोकर आता है, उससे लोगों का मनोरंजन हो जाता है, वैसे महाकाव्यों में बीच-बीच में ऐसी कथाएं आती हैं जो अद्‌भुत-रस उत्पन्न करती हैं। राक्षस, पिशाच, दैत्य, असुर ये सब पुरानी मानव

जातियों के नाम हैं। कोई मानव इतना भोजन नहीं खा सकता जितना ऊपर लिखा है। खास बात, भीम की बहादुरी को उभारना है। ऐसी कथाएं काल्पनिक होती हैं।

. धृष्टद्युम्न और द्रौपदी की उत्पत्ति

द्रुपद जब द्रोण से पराजित होकर उनके पास बांधकर ले जाये गये थे तब विनम्रतापूर्वक उन्होंने कहा था कि मैं आपकी अधीनता में प्रसन्न हूं। उनका यह कहना उनकी विवशता थी। तथ्य यह था कि द्रुपद द्रोण से पराजित होकर भीतर-भीतर उनसे बदला लेने के लिए जलते थे। अतएव द्रुपद ऐसा पुत्र प्राप्त करना चाहते थे जो आगे चलकर द्रोण को मार सके। वे ऐसे ब्राह्मण की खोज करने लगे जो कर्मकांड का विद्वान हो और वह ऐसा यज्ञ कराये जिसके प्रभाव से वीर पुत्र पैदा हो।

खोजते-खोजते उन्हें याज और उपयाज नाम के दो ब्राह्मण भाई मिले। याज बड़े थे और उपयाज छोटे। दोनों तेजस्वी, तपस्वी तथा विद्वान थे। द्रुपद ने छोटे भाई उपयाज को प्रणाम कर विनय से कहा–विप्रवर उपयाज! जिस यज्ञ से मुझे एक वीर पुत्र प्राप्त हो जो द्रोण को मार सके, आप ऐसा उपाय करें। मैं आपको एक अर्बुद (दस करोड़) गायें दक्षिणा में दूंगा।

उपयाज ने कहा–'मैं ऐसा कर्म नहीं करूंगा।' द्रुपद के बहुत कहने पर उपयाज ने कहा–राजन! मेरे बड़े भाई याज से कहो, वह कर सकता है। वह लोभी है। द्रुपद बड़े भाई याज के पास गये। उन्होंने उनसे भी यही बात कही और दक्षिणा में एक अर्बुद गायें देने की बात कही। याज ने सोचा यह बहुत बड़ा कार्य है, इसलिए उन्होंने छोटे भाई उपयाज को, जो ज्यादा त्यागी था, अपने साथ तैयार कर लिया। अतएव उपयाज ने द्रुपद को यज्ञ का वह उपदेश दिया जिससे पैदा होकर वीर पुत्र द्रोण को मार सके।

हवन के अंत में याज ने द्रुपद की पत्नी को आज्ञा दी कि मेरे पास हविष्य ग्रहण करने के लिए आओ। तुम्हें एक पुत्र और एक कन्या पैदा होगी। याज ने संस्कार युक्त हविष्य की आहुति जैसे अग्नि में डाली, तुरंत ही उस हवनकुंड की अग्नि से एक तेजस्वी कुमार पैदा हुआ। उसके मस्तक पर किरीट था, शरीर पर कवच तथा हाथों में अस्त्र-शस्त्र लिए हुए वह जोर-जोर से गरज रहा था। इसके बाद यज्ञ वेदी में से एक कुमारी कन्या प्रकट हुई जो सांवली और अत्यंत सुंदरी थी। उसके शरीर से नील-कमल-सी सुगंध निकलकर एक कोस तक फैलती थी। उसके जैसी सुंदर स्त्री पृथ्वी पर दूसरी नहीं थी। आकाशवाणी हुई

कि इस कन्या का नाम 'कृष्णा' है। यह क्षत्रियों का संहार करने के लिए पैदा हुई है। इससे कौरवों को बड़ा भय प्राप्त होगा।

उपर्युक्त आकाशवाणी सुनकर पांचाल लोग प्रसन्नता में उछलने लगे। द्रुपद की पत्नी याज की शरण में जाकर निवेदन करने लगी कि ये पुत्र और पुत्री दोनों मेरे सिवा अन्य किसी को अपनी माता न समझें। याज ने एवमस्तु कहकर स्वीकार किया। फिर याज ने उत्पन्न हुए पुत्र का नाम 'धृष्टद्युम्न' रखा। 'धृष्ट' का अर्थ है–साहसी, ढीठ, अक्खड़, उच्छृंखल, और 'द्युम्न' का अर्थ है तेजोमय, ज्योतित। पुत्री का नाम तो आकाशवाणी ने ही 'कृष्णा' बता दिया था। धृष्टद्युम्न की शिक्षा द्रोण के द्वारा ही हुई। उन्हीं से उन्हें अस्त्र-शस्त्र की शिक्षा मिली (अध्याय -)।

मीमांसा

यज्ञ-हवन ब्राह्मण-पुरोहितों का पेटधंधा था। राजाओं और धनियों को यज्ञ से सब कुछ पाने का झांसा दिया जाता था। उसी की महिमा में यहां याज-उपयाज की कल्पना करके यज्ञ द्वारा धृष्टद्युम्न तथा कृष्णा (द्रौपदी) की पैदाइश बतायी गयी है। पाठक स्वयं समझ सकते हैं कि यज्ञ वेदी के हवन-कुंड की आग से मनुष्य नहीं पैदा हो सकते हैं। पंडितों ने पोथियों में हवनकुंड से अस्त्र-शस्त्र, सेना आदि सब कुछ पैदा कर डाला है जो केवल कागज-स्याही का जाल है। बच्चे मां-बाप से शिशु रूप में नंगे पैदा होते हैं। आकाशवाणी भी केवल बकवास है। आज-कल यंत्र द्वारा जो आकाशवाणी होती है वह कारण-कार्य व्यवस्था युक्त है और ठीक है।

द्रुपद की पत्नी पुरोहित याज से कहती है कि धृष्टद्युम्न और कृष्णा मुझे ही माता मानें, अन्य को नहीं। इससे यह ध्वनन होता है कि उससे ये बच्चे नहीं पैदा हुए हैं, किसी अन्य से ये पैदा किये गये हैं। इसीलिए इनकी अलौकिकता यज्ञ के षड्यंत्र से सिद्ध करने का प्रयास किया गया है। मानवतावादी के लिए पैदा हुए बच्चे किससे पैदा हुए, इसका महत्त्व नहीं है, बच्चे मनुष्य हैं और वे आदरणीय हैं।

. पांडवों की पांचाल-यात्रा और द्रौपदी का पूर्वजन्म वृत्तांत

कुंती ने पांडवों से कहा–बच्चो! हम लोग इन ब्राह्मण देवता के घर में बहुत दिन रह लिये। यहां के वन-उपवन बहुत बार देख लिए। अब इनमें पहले जैसी

प्रसन्नता नहीं मिलती है। अब भिक्षा मिलने में भी यहां कठिनाई होती है। एक जगह बहुत दिन रहना उचित भी नहीं है। अतएव तुम लोगों की राय हो तो पांचाल देश में चलें। युधिष्ठिर ने माता की बात स्वीकार ली, किंतु भाइयों का मन भी जानना चाहिए कि वे यहां से अन्यत्र चलना चाहते हैं कि नहीं। अंततः सब भाई चलने के लिए तैयार हो गये।

चलते-चलते बीच में वन ही में व्यास जी मिल गये। उन्होंने द्रौपदी के पूर्वजन्म की कथा ही सुना डाली। उन्होंने पांडवों से कहा–पहले की बात है, एक तपोवन में किसी ऋषि की कन्या थी, जो सुंदरी और सद्गुण संपन्न थी; परंतु अपने किसी खोटे कर्म से उसे पति नहीं मिला। तो उसने अपनी तपस्या से शंकर जी को प्रसन्न किया। शंकर जी आये और उस कन्या से वर मांगने के लिए कहा। कन्या ने वर में सर्वगुण संपन्न पति की याचना की। इस वाक्य को उसने बार-बार दोहराया। शंकर जी ने कहा–भद्रे तुम्हारे भरतवंशी पांच पति होंगे। कन्या ने कहा–भगवन! मैं एक ही पति चाहती हूं। शंकर जी ने कहा कि तुमने 'पति मिले' इस वाक्य को पांच बार दोहराया है, इसलिए मैंने तुम्हें अगले जन्म में पांच पति मिलने का वर दिया है।

ऊपर की कथा सुनाकर व्यास जी ने पांडवों से कहा कि तुम लोग पांचाल देश जाओ। वह कन्या अब द्रुपद के यहां कृष्णा एवं द्रौपदी नाम से विद्यमान है। वह तुम सबकी पत्नी बनेगी। द्रौपदी को पाकर तुम लोग सुखी होओगे (अध्याय)।

मीमांसा

द्रौपदी का पंच-भतारी होना सही सिद्ध करने के लिए यहां वेदव्यास और शंकर जी को तकलीफ दी गयी। बेचारे शंकर जी को लेखक पंडित ने विवेकहीन बना डाला जिससे वे इस प्रकार वर दे डाले। पंडित जिसके दोषों को ढांकना चाहता है उसके लिए ऐसी मिथ्या कहानी गढ़ता है। वह एक गलत को सही सिद्ध करने के लिए अनेक गलत बात करता है। पूर्वजन्म में कौन कहां और कैसा था, यह कोई नहीं जानता है।

. गंधर्व द्वारा अर्जुन को तपतीनंदन कुरुवंशी कथन

पांचों पांडव मां कुंती के साथ आगे बढ़े। वे गंगा के तट पर सोमाश्रयायण नाम के तीर्थ में पहुंच गये। अंगारपर्ण नाम का गंधर्व अपनी पत्नियों के साथ गंगा में जलक्रीड़ा कर रहा था। उसे पांडव का आना बाधक लगा

और गंधर्व तथा अर्जुन से बाताकुही हो गयी; और इतना ही नहीं, मारामारी शुरू हो गयी। अंततः अर्जुन से गंधर्व परास्त हुआ। युधिष्ठिर ने अर्जुन को मना कर दिया कि इसे जान से मत मारो। गंधर्व ने प्रसन्न होकर अर्जुन को चाक्षुषी नाम की विद्या दी, जिसके प्रभाव से तीनों लोकों में चाहे जिस वस्तु को जिस रूप में देखना चाहे मनुष्य देख सकता है। इसके साथ उसने अर्जुन को सैकड़ों घोड़े दिये। गंधर्व ने ब्राह्मण पुरोहित की बड़ी बड़ाई की। बात के दौरान गंधर्व ने अर्जुन को 'तापत्यवर्धन' कहकर उनकी प्रशंसा की और उन्हें तपतीनंदन भी कहा।

अर्जुन ने कहा कि आप हमें तपतीनंदन कैसे कहते हैं। हम कुंतीनंदन हैं। यह तपती कौन है? गंधर्व ने कहा कि जो पृथ्वी से स्वर्ग तक अपनी रश्मियों को फैलाकर प्रकाश करते हैं, उन्हीं सूर्यदेव की तपती नाम की कन्या थी जिसके समान तीनों लोकों में कोई सुंदरी नहीं थी। सूर्यदेव को उसके लिए वर की चिंता थी। कुरुकुल में राजा ऋक्ष के पुत्र राजा संवरण थे। उन्होंने सूर्यदेव की आराधना की। राजा एक दिन शिकार करने वन में गये थे। उन्होंने उस तपती को देखा, जिसके समान कोई स्त्री सुंदरी नहीं थी। वे उसकी बड़ाई करने लगे, परंतु वह बादलों में खो गयी। राजा संवरण उसके मोह के कारण मूर्च्छित हो गये। जब जगे, तो देखा कि वह सुंदरी मुस्कराते हुए सामने खड़ी है। वे तपती से कहने लगे कि तुम मेरी भार्या बन जाओ। तपती ने कहा– *"न स्वतंत्रा हि योषितः"*–स्त्रियां स्वतंत्र नहीं होतीं। मेरा मन भी तुममें अटक गया है। तुम मेरे पिता से मुझे मांग लो।

राजा संवरण ने अपने पुरोहित वसिष्ठ का स्मरण किया। वे आ गये। राजा ने तपती की मांग की। वसिष्ठ आकाश में गये और सूर्यदेव से तपती को मांगकर संवरण को दे दिये। राजा संवरण से तपती को गर्भ रहा जिससे कुरु नाम के राजा पैदा हुए। गंधर्व ने कहा कि इसलिए मैंने आपको तपतीनदंन कहा। अतः आप लोग कुरु से कौरव, पूरु से पौरव, अजमीढ़ से आजमीढ़ और भरत से भारत कहलाते हैं (अध्याय –)।

मीमांसा

गंधर्व ने अर्जुन को चाक्षुषी विद्या दी जिसके प्रभाव से तीनों लोकों की किसी भी वस्तु को जिस रूप में देखना चाहे देख सकते थे। यह कल्पना के अलावा कुछ नहीं है। कोई ऐसी विद्या नहीं है जिससे सभी कुछ देख लिया जाय। और फिर उससे जिस वस्तु को जिस रूप में देखना चाहे देख सकते थे।

इसका अर्थ हुआ कि यदि मक्खी को हाथी रूप में देखना चाहे तो वह वैसा दिखायी देगी। ये सब अनर्गल बातें हैं।

आकाश के ज्वलंत सूर्य से क्या तपती नाम की लड़की पैदा होगी, और उससे संवरण नाम के मनुष्य का विवाह और उससे कुरु नाम का बच्चा पैदा होगा? ये सब मिथ्या कथा इसलिए गढ़ी गयी है कि कुरुवंश सूर्य-पुत्री से उत्पन्न माना जाय। यह सब लेखक का निरर्थक प्रयास है।

. वसिष्ठ-विश्वामित्र द्वंद्व, ब्राह्मण पुरोहित का महत्त्व

गंधर्व ने अर्जुन से कहा–राजा को देश-विजय के लिए किसी विशेष योग्य ब्राह्मण को पुरोहित बनाना चाहिए। इस क्रम में गंधर्व ने विश्वामित्र की उद्दंडता और वसिष्ठ के क्षमाभाव का वर्णन किया। गंधर्व ने कहा कि कान्यकुब्ज देश में गाधि नाम के राजा थे। उनके पिता का नाम कुशिक था। गाधि के पुत्र विश्वामित्र थे। एक दिन राजा विश्वामित्र मंत्रियों तथा सेना सहित वन में शिकार करने निकले। वहां ऋषि वसिष्ठ का आश्रम मिला। वसिष्ठ के पास एक कामधेनु गाय थी। उससे जो मांगा जाता और जितनी मात्रा में मांगा जाता, वह सब तुरंत दे देती। वसिष्ठ ने उससे संपूर्ण खाद्य, पेय, रत्न, वस्त्र आदि सब मांगकर सेना सहित विश्वामित्र की सेवा कर उन्हें संतुष्ट कर दिया।

विश्वामित्र ने वसिष्ठ से उस गाय को मांगा, वसिष्ठ ने नहीं दिया। विश्वामित्र ने बलपूर्वक गाय को घसीट ले जाना चाहा। गाय ने कुपित होकर पूंछ से पह्लवों, थनों से द्रविडों और शकों, योनि से यवनों, गोबर और मूत्र से शबरों, पार्श्व-भाग से पौण्ड्रों, किरातों, यवनों, सिंहलों, बरबरों और खसों, फेन से चिबुकों, पुलिंदों, चीन, हूणों, केरलों, म्लेच्छों को पैदा किया। इनकी सेना ने विश्वामित्र की सेना को भगा दिया (अध्याय –)।

विश्वामित्र ने अपने क्षत्रिय-बल को धिक्कारा और तपस्या करके उन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त किया।

मीमांसा

जैसा कि ऊपर कामधेनु गाय का वर्णन है, घोर काल्पनिक है और उससे यवनों आदि की उत्पत्ति भी अस्वाभाविक तथा काल्पनिक है। पौराणिकों ने विश्वामित्र और वसिष्ठ की खटपट की कल्पना बहुत बढ़ा रखी है।

. कल्माषपाद का शक्ति से शापित, वसिष्ठ से उद्धार होना

गंधर्व ने अर्जुन से कहा–इक्ष्वाकुवंश में एक राजा कल्माषपाद नाम के हुए हैं। वे कहीं जा रहे थे। उधर से वसिष्ठ के सौ पुत्रों में श्रेष्ठ शक्ति आ रहे थे। रास्ता संकरा था। दोनों में से किसी को रास्ता से हटना था तब दूसरा निकल सकता था। शक्ति को अपने ब्राह्मणत्व का अहंकार और कल्माषपाद को अपनी ठकुराई की हैकड़ी। दोनों अड़ गये। कौन रास्ता छोड़े। एक ने कहा–'तुम हटो।' दूसरे ने कहा–'तुम हटो।' राजा कल्माषपाद ने शक्ति पर कोड़े से प्रहार कर दिया। शक्ति गिर पड़े। उन्होंने कल्माषपाद को शाप दिया कि जा तू मनुष्य का मांस का खाने वाला राक्षस हो जा। इन्हीं दिनों वसिष्ठ और विश्वामित्र में यजमानी को लेकर झगड़ा चल रहा था। अतएव विश्वामित्र ने कल्माषपाद को चकमा देकर भ्रम में डाल दिया और उनके शरीर में राक्षस प्रवेश करा दिया जिससे वे मनुष्य का मांस खाने के इच्छुक हो गये और तुरंत शक्ति को ही खा गये। इतना ही नहीं, विश्वामित्र की प्रेरणा से कल्माषपाद ने वसिष्ठ के अन्य पुत्रों को भी खा डाला।

वसिष्ठ अपनी पुत्रवधुओं को दुखी देखकर अपना शरीर त्याग देने के लिए पर्वत से कूदे, आग में प्रवेश किये और समुद्र में कूदे, परंतु नहीं मरे। फिर उन्होंने अपने को बांधकर नदी में डाल दिया, परंतु उनके बंधन टूट गये और वे नहीं मरे। इस नदी में उनका पाश टूट जाने से नदी का नाम 'विपाशा' हो गया। जो पंजाब में आज-कल व्यास नाम से प्रसिद्ध है। इसके बाद वसिष्ठ दुख से पीड़ित शतद्रु नदी में मरने के लिए कूदे। जब वे किसी प्रकार नहीं मरे तब आश्रम पर आ गये। चल ही रहे थे कि पीछे से शक्ति की पत्नी अदृश्यन्ती आ रही थी। वसिष्ठ को उधर से वेदपाठ सुनायी दिया। उन्होंने लौटकर देखा तो उन्हीं की बड़ी पुत्रवधू है। वधू ने कहा–मैं बारह वर्षों से गर्भवती हूं। यह मेरा गर्भस्थ बालक बारह वर्षों से मेरे पेट में वेदपाठ कर रहा है। वसिष्ठ प्रसन्न हुए और उन्होंने सोचा कि मेरी वंश-परंपरा जीवित है, अतएव उन्होंने मरने की इच्छा छोड़ दी।

चलते-चलते कल्माषपाद मिल गये जो राक्षस स्वभाव के हो गये थे। वे वसिष्ठ को खाने के लिए एक काष्ठ लेकर दौड़े। वसिष्ठ ने उन पर मंत्रपूत जल छिड़क दिया जिससे कल्माषपाद शाप से मुक्त होकर अपने दिव्य रूप में आ गये। बारह वर्ष तक कल्माषपाद राक्षस बने मनुष्य का मांस खाते थे। जिन

वसिष्ठ के सभी पुत्रों को खा डाला था, उन्होंने ही उन्हें शाप से मुक्त किया और कहा–खबरदार, अब कभी ब्राह्मणों का अपमान न करना।

राजा कल्माषपाद अपनी राजधानी अयोध्या में गये और साथ में वसिष्ठ भी गये। वसिष्ठ ने राजा की रानी मदयन्ती को नियोग-विधि से गर्भवती किया। उसके बाद अपने आश्रम पर चले गये। इधर मदयन्ती का गर्भ बारह वर्ष स्थिर रहा। अंततः रानी ने अश्म अर्थात पत्थर से अपने गर्भ पर प्रहार किया। उससे पैदा होने वाला बच्चा अश्मक नाम से प्रसिद्ध हुआ। आगे चलकर अश्मक ने पौदन्य नामक नगर बसाया (अध्याय –)।

मीमांसा

यह विचित्र कहानी इसलिए गढ़ी गयी है कि ब्राह्मण का अपमान करने वाले की दशा बुरी होती है। उसको रास्ता देना चाहिए और पूजना चाहिए और उसे अपनी पत्नी भी अर्पित कर देना चाहिए। बारह-बारह वर्ष तक शिशु का गर्भ में रहना, गर्भ में वेद-पाठ करना जैसी असत्य बातें धार्मिक कहलाने वाले ही लिख सकते हैं जो सच्चे धर्म से दूर हैं।

. और्व का कोप तथा पितरों का क्षमा करने का उपदेश

वसिष्ठ के श्रेष्ठ पुत्र शक्ति की पत्नी से पराशर पैदा हुए। बड़ा होने पर पराशर को पता लगा कि मेरे पिता शक्ति तथा उनके अन्य भाइयों को राजा कल्माषपाद ने राक्षस बनकर खा लिया था, तो वे कुपित होकर लोकों को नष्ट कर देना चाहे; परंतु वसिष्ठ ने उन्हें ऐसा करने से रोक दिया।

वसिष्ठ ने अपने पौत्र पराशर को एक कथा सुनायी। कृतवीर्य नाम के राजा थे। उन्होंने सोमयज्ञ करके भृगुवंशी ब्राह्मणों को दान में बहुत धन दिया। कुछ दिनों में राजा मर गये। राजा के वंशज आगे चलकर धनहीन हो गये, तो वे अपने पुरोहित-परिवार भृगुवंशी ब्राह्मणों के घर से धन लाना चाहे। धन कोई देना नहीं चाहता। अंततः राजवंशियों ने भृगुवंशी ब्राह्मणों के धन को लूट लिया और उन्हें मार भी डाला। भृगुवंशी ब्राह्मणों की पत्नियां भय से भागकर हिमालय की कंदराओं में जा छिपीं। उन में से एक स्त्री ने अपने गर्भ को पेट से निकालकर अपनी जांघ में छिपा लिया। एक डरी हुई ब्राह्मणी ने यह समाचार

क्षत्रियों को दे दिया। क्षत्रिय लोग उस गर्भ को नष्ट करने के लिए पहुंच गये। परंतु मां की जांघ में छिपा हुआ बच्चा जांघ फाड़कर बाहर निकल आया। उसके तेज प्रकाश से सब क्षत्रिय अंधे हो गये। क्षत्रियों ने बड़ी चिरौरी-विनती की कि हमें आखों की रोशनी मिल जाय तो हम चुपचाप अपने घर चले जायेंगे।

ब्राह्मणी ने कहा–मैं तुम पर क्रुद्ध नहीं हूं। परंतु मेरी जांघ से पैदा हुआ यह भृगुवंशी बच्चा तुम्हारे ऊपर कुपित है। मैंने इस बच्चे को अपनी जांघ में सौ वर्ष तक छिपाकर रखा है। इसने छह वेदांगों सहित चारों वेदों को गर्भ में ही याद कर डाला है। इस मेरे पुत्र का नाम 'और्व' है। इसी से याचना करो। यह तुम्हें क्षमा कर नेत्र-ज्योति दे देगा। अंततः क्षत्रियों के अनुनय-विनय करने से और्व ने उन्हें नेत्र-ज्योति दे दी। माता का उरु (जांघ) फाड़कर निकलने से इस भृगुवंशी ब्राह्मण का नाम 'और्व' हुआ।

और्व का क्रोध शांत नहीं हुआ। उसने सोचा कि भृगुवंशियों की हत्या करने वालों का विनाश करने के लिए मुझे तप करना चाहिए। उसने तप किया। तप से प्रसन्न होकर उनके भृगुवंशी पितर आये और उन्होंने और्व से कहा कि वस्तुतः हम लोग लंबी-लंबी आयु के हो गये थे, परंतु मर नहीं रहे थे। आत्महत्या करने से दुर्गति होती है, अतएव हमने कुछ ऐसी युक्ति रची जिससे क्षत्रिय लोग हमें मार डालें। अंततः हम मारे गये और उसके फल में हम स्वर्ग का वास पाये। बेटा, क्रोध पाप है। तुम क्षत्रियों को या लोक को न मारकर अपने क्रोध को मारो (अध्याय -)।

मीमांसा

क्षत्रियों और ब्राह्मणों का आपसी संघर्ष चलता था। इसी के परिणाम में उक्त जैसी कहानियां बनायी गयीं। पेट का गर्भ जांघ में रखना और उसे सौ वर्ष तक रखना और उसी में और्व का छह वेदांगों सहित चारों वेदों का अध्ययन कर लेना अद्भुत रस उत्पन्न करने वाली मिथ्या कथा है; क्योंकि यह सब असंभव है। और्व के देखते ही क्षत्रियों का अंधा हो जाना भी झूठी ब्राह्मणी धाक जमाने का प्रपंच है। यह सब भृगुवंशी ब्राह्मणों की रची गाथाएं हैं। उन्होंने अपने को हड़काने वाले तेज से संपन्न तथा क्षमाशील सिद्ध करने की चेष्टा की; और मरे हुए पितरों को स्वर्ग से बुलाकर उनसे अनर्गल प्रलाप करवा लिया है कि हम मर नहीं रहे थे। अतएव अपने मरने के लिए और स्वर्ग जाने के लिए क्षत्रियों का अपने ऊपर हमला करवा लिए।

. और्व का क्रोध समुद्र में बड़वानल बना

पितरों का क्षमा–उपदेश सुनकर भी और्व का क्रोध शांत नहीं हुआ। उन्होंने कहा–मैं जिन दिनों माता की जांघ में गर्भ–शय्या पर सोता था, उन दिनों क्षत्रियों द्वारा भार्गव–वंशियों के वध से माताओं का करुण–क्रंदन मुझे साफ सुनायी देता था। नीच क्षत्रियों ने भृगुवंशी ब्राह्मणों के गर्भस्थ बच्चों को भी काट डाला। इस भय से मेरी वंश–परंपरा संसार में भागती फिरी, परतु उसे कहीं शरण नहीं मिली। अत: मैं आप लोगों का क्षमा–उपदेश मानने में असमर्थ हूं।

अंतत: पितरों के समझाने से और्व ने अपना क्रोध समुद्र के जल में छोड़ दिया जो आज भी बड़वानल के रूप में उबल रहा है।

वसिष्ठ ने पराशर को उपर्युक्त कथा सुनाकर उन्हें अपने पिता शक्ति का बदला लेने की बात से विरत करा दिया। परंतु पराशर का कोप राक्षसों पर जा भिड़ा। उन्होंने राक्षससत्र नामक यज्ञ का अनुष्ठान किया। जिसमें राक्षस–वंश के बूढ़े, बच्चे भी भस्म होने लगे। फिर पुलस्त्य ने आकर रोका और कहा कि तुम्हारे पिता शक्ति की हत्या के संबंध में ये राक्षस–बच्चे कुछ जानते ही नहीं हैं। इन्हें क्यों मारते हो? तुम्हारे पिता और चाचाओं की मृत्यु में उनके अपने प्रारब्ध ही कारण रहे। अंतत: पराशर ने राक्षससत्र यज्ञ समाप्त कर दिया।

अर्जुन ने गंधर्व से पूछा कि वसिष्ठ जैसे ज्ञानी राजा कल्माषपाद की रानी मदयन्ती में नियोग द्वारा गर्भाधान किया, यह तो परस्त्रीगमन रूप पाप है। तो गंधर्व ने बताया कि जब राजा कल्माषपाद शापित होकर अपनी पत्नी के साथ वन में भटक रहे थे, उस समय एक ब्राह्मण अपनी पत्नी को वन में ही गर्भाधान करने वाला था। राजा कल्माषपाद ने उस ब्राह्मण को मारकर खा लिया था। इससे ब्राह्मणी ने राजा को शाप दिया कि यदि तुम अपनी पत्नी में गर्भाधान करोगे, तो मर जाओगे। इस तरह ब्राह्मणी राजा को शाप देकर स्वयं अग्नि में प्रविष्ट हो गयी। इस शाप के डर से राजा कल्माषपाद ने पुत्र प्राप्ति के लिए अपनी रानी मदयन्ती से वसिष्ठ का नियोग करवाया था (अध्याय   –   )।

मीमांसा

क्षत्रियों और भार्गव–वंशियों का कलह उक्त कथाओं से उजागर होता है। और्व अपनी माता की जांघ की गर्भशय्या में पड़े–पड़े अपने भार्गव–वंशियों का करुण क्रंदन सुनते थे। अंतत: और्व ने क्रोध को समुद्र में छोड़ा जो आज भी बड़वानल के रूप में उबल रहा है। इन कथाओं में अतिशयोक्तियों और असंभव

कथनों के बिना लेखक पंडित को संतोष नहीं होता है। परंतु इससे संसार में भ्रम और अज्ञान फैलते हैं।

राक्षस-वंशियों से भी कलह था, तो पराशर ने राक्षससत्र ही कर डाला जिसमें राक्षस-वंशी बूढ़े-बच्चे तक मार डाले गये। आज-कल लोग हिंदू-मुसलिम के झगड़ा को तूल देते हैं। झगड़ा वर्ग का नहीं है, अपितु भोग और प्रतिष्ठा के लोभ का है। इसी को लेकर भिन्न वर्ग में, वर्ग के भीतर तथा परिवार में भी झगड़ा होता है। कलह से बचने के लिए लोभ, मोह, अहंकार, क्रोध से बचना चाहिए।

वसिष्ठ द्वारा मदयन्ती का गर्भाधान करना उचित सिद्ध करने के लिए यहां नयी कथा जोड़ी गयी है। वर और शाप का झूठा बवाल रचकर इसे ठीक सिद्ध किया गया है। किसी के कह देने से कोई न मर जायेगा और न मरा हुआ जी जायेगा। दुख देने वाला स्वयं शापित होता है और दुख पाता है तथा सुख देने वाला स्वयं वर होता है, श्रेष्ठ होता है और आनंदित होता है।

पीछे के पांच संदर्भ महाभारत की मुख्य कथा से हटकर हैं।

. पांडवों की पांचाल-यात्रा तथा स्वयंवर

अर्जुन तथा अन्य भाई, गंधर्व के कहने से धौम्य ऋषि को अपना पुरोहित बनाये। परंतु पांडव ब्राह्मण-वेष में छिपकर रहते थे, इसलिए उनको अभी साथ नहीं ले सकते थे। गंधर्व ने जो अर्जुन को कलाराशि के घोड़े दिये थे, उन्हें उन्होंने गंधर्वों के पास ही छोड़ दिये और कह दिया कि उचित समय पर हम इन्हें ले लेंगे।

पांडव पांचाल देश के लिए चल दिये। रास्ते में ब्राह्मणों का जत्था मिला, वे भी द्रौपदी का स्वयंवर देखने जा रहे थे। उन्होंने पांडवों से बातचीत की। पांडव कुंती सहित पांचाल देश में जाकर राजा द्रुपद की नगरी में एक कुम्हार के घर टिक गये। भिक्षा करके लाते थे और माता कुंती के साथ सब भाई बैठकर भोजन कर लेते थे। कहा जाता है कि जितना भोजन अन्य चार भाई और कुंती करती थी, उतना अकेले भीम करते थे।

स्वयंवर का दिन था। सभा खचाखच भरी थी। द्रुपद-पुत्र धृष्टद्युम्न ने सभा में खड़ा होकर उन सभी राजा-महाराजाओं का परिचय दिया जो सभा में विराजमान थे। इसके बाद बताया कि यह धन्वा है और यह बाण है और ऊपर निशाना है। इस धन्वा और बाण से जो निशाने को वेध देगा, मेरी बहिन कृष्णा

द्रौपदी उसकी पत्नी होगी। सारे राजे–महाराजे अपना–अपना बल अजमाकर बैठ गये। अर्जुन ने धन्वा–बाण उठाया और क्षण ही में लक्ष्य वेध दिया। सभा में आनंद का कोलाहल हो गया। हजारों ब्राह्मण हर्ष में अपने दुपट्टे हिलाने लगे। द्रौपदी ने आकर अर्जुन के गले में जयमाला डाल दी।

क्षत्रिय राजे–महाराजे भड़क गये। वे कहने लगे कि द्रुपद ने हमें बुलाकर हमारा सत्कार किया, अच्छा खिलाया–पिलाया, परंतु अंततः हमारा अपमान किया। स्वयंवर में कन्या द्वारा वर प्राप्त करने का अधिकार ही ब्राह्मणों को नहीं है। यह प्रसिद्ध बात है कि स्वयंवर क्षत्रियों का है। राजा लोग द्रुपद पर कुपित होकर उन्हें मार डालने के लिए तैयार हो गये। भीड़ में खींचतान और भगदड़ मच गयी। युधिष्ठिर ने कुंती, सहदेव और नकुल से कहा कि यहां भगदड़ मच गयी है, हम लोग चुपचाप निकल चलें; और वे कुम्हार के घर अपने डेरे पर चले गये। अंततः अर्जुन और भीम को राजाओं से लड़कर उनको पछाड़ना पड़ा। पश्चात अर्जुन और भीम द्रौपदी को लेकर अपने डेरे पर पहुंचे।

पांडव ब्राह्मण–वेष में थे, अतएव उन्हें ब्राह्मण समझकर वहां उपस्थित ब्राह्मण–समूह को बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्हें लगा कि हमारा एक ब्राह्मण युवक द्रौपदी को जीत लिया, ठाकुर लोग टगर–टगर ताकते रह गये (अध्याय –)।

मीमांसा

मनुष्य में वर्ग–मोह जन्मजात लगता है। अर्जुन ब्राह्मण–वेष में होने से ब्राह्मण–समाज उन्हें अपना मान लिया, पीछे जब वे जानेंगे कि अरे, ये तो ठाकुर हैं, तब बेचारे उदास हो जायेंगे।

. पांचों पांडवों का द्रौपदी के प्रति आकर्षण और विवाह

भीम और अर्जुन द्रौपदी को लेकर कुटिया में पहुंचे, जिसमें कुंती थी। उन्होंने कहा–माता भिक्षा लाये हैं। कुंती ने बिना देखे कहा–*'भुंक्तेति समेत्य सर्वे'*–सब मिलकर भोग करो। इसके बाद जब कुंती ने द्रौपदी को देखा तब उन्होंने कहा–हाय, मेरे मुख से बड़ी अनुचित बात निकल गयी। उन्होंने युधिष्ठिर से कहा कि अब जैसे मेरी बात झूठी न हो और द्रौपदी को दोष न लगे, ऐसा उपाय करो। युधिष्ठिर ने कहा कि द्रौपदी को

अर्जुन ने जीता है। ऐ अर्जुन! तुम द्रौपदी से अपना विवाह करो। अर्जुन ने कहा कि बड़े भाई युधिष्ठिर, फिर भीम, तब मेरा, उसके बाद नकुल और सहदेव का विवाह होना चाहिए। दो बड़े भाई के अविवाहित रहते हुए मैं अपना विवाह कैसे कर लूं?

अर्जुन के ऐसे भक्तिभाव संपन्न वचन सुनकर सभी पांडव द्रौपदी की ओर नजर गड़ाकर देखे। पांचों भाइयों ने द्रौपदी को अपने हृदय में बसा लिया। पांडु-पुत्रों को द्रौपदी के प्रति मोह उत्पन्न हो गया और सब उसके प्रति काम-मोहित हो गये। युधिष्ठिर ने सोचा कि द्रौपदी को लेकर हम भाइयों में फूट न हो जाय, अतएव उन्होंने कहा कि द्रौपदी हम पांचों की पत्नी रहेगी। सभी भाई प्रसन्न हो गये।

इसी बीच श्रीकृष्ण और बलराम पांडवों से आकर मिले; और वारणावत की आग से बच निकलने की प्रसन्नता से बातचीत की। इसके बाद वे चले गये। इधर द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न ने कुम्हार के घर आकर सारा कच्चा चिट्ठा जान लिया और द्रुपद से जाकर कहा कि ये पांडव लगते हैं। इसके बाद द्रुपद ने अपना पुरोहित कुम्हार के घर पांडवों के पास भेजा।

कुंती तथा द्रौपदी सहित पांडव द्रुपद के राजभवन में बुलाये गये। युधिष्ठिर ने अपना तथा भाइयों का द्रुपद के सामने खुलकर परिचय दिया। इसके बाद राजा द्रुपद ने युधिष्ठिर से कहा कि अब द्रौपदी का अर्जुन द्वारा पाणिग्रहण एवं विधिवत विवाह हो जाय। युधिष्ठिर ने कहा कि द्रौपदी के साथ मेरा भी विवाह करना होगा। द्रुपद ने कहा कि आप या आपके किसी भाई के साथ द्रौपदी का पाणिग्रहण हो जाय। युधिष्ठिर ने कहा कि द्रौपदी के साथ हम पांचों भाइयों का विवाह होगा।

द्रुपद ने कहा कि एक पुरुष की कई पत्नियों का होना सुना जाता है, परंतु एक स्त्री का बहुत पति का होना नहीं सुना जाता। "युधिष्ठिर। तुम धर्म को जानने वाले और पवित्र हो, इसलिए तुम्हें लोक और वेद के विरुद्ध ऐसा अधर्म नहीं करना चाहिए। तुम कुंती के पुत्र होकर तुम्हारी बुद्धि ऐसी क्यों हो रही है?"

युधिष्ठिर ने वीटो पावर लगाया—धर्म की गति अत्यंत सूक्ष्म है। मेरी वाणी कभी झूठ नहीं होती और मेरी बुद्धि कभी अधर्म में नहीं लगती। हमारी माता

. लोकवेदविरुद्धं त्वं नाधर्मं धर्मविच्छुचिः।
कर्तुमर्हसि कौन्तेय कस्मात् ते बुद्धिरीदृशी   आदि पर्व

की यही आज्ञा है। अतएव आप बिना सोचे-विचारे द्रौपदी का पांचों के साथ विवाह करें। आप किसी प्रकार शंका न करें।

द्रुपद हताश हो गये। उन्होंने कहा–युधिष्ठिर! तुम, कुंती देवी और मेरा पुत्र धृष्टद्युम्न सब मिलकर विचार कर लें कि क्या करना चाहिए। उसे अगले दिन किया जाय।

दूसरे दिन द्रुपद ने युधिष्ठिर से पुनः कहा कि पांचों का द्रौपदी के साथ विवाह होना पाप है। धृष्टद्युम्न ने कहा–बड़ा भाई सदाचारी होते हुए अपने छोटे भाई की पत्नी के साथ कैसे समागम कर सकता है? किंतु युधिष्ठिर बारंबार धर्म की दोहाई देकर धुच्च बांधे रहे कि द्रौपदी का पंचभतारी होना धर्म है।

इसी बीच लेखक पंडित ने पुनः वेदव्यास को तकलीफ देकर बुला लिया और उनसे उलटी-सीधी काल्पनिक कथाएं कहलवाकर पांचों पांडवों के साथ द्रौपदी का विवाह होना उचित ठहराया। अंततः राजा द्रुपद को द्रौपदी का विवाह पांचों पांडवों से करना पड़ा। विवाह के बाद कुंती ने द्रौपदी को उपदेश दिया कि तुम नित्य अतिथि साधु पुरुषों एवं समस्त आगतों का स्वागत करना, नम्र रहना आदि। पांडव द्रुपद के नगर में सुखपूर्वक रहने लगे (अध्याय –)।

मीमांसा

वस्तुतः धर्मराज कहलाने वाले युधिष्ठिर स्वयं द्रौपदी में मोह गये थे। कुंती ने बिना जाने कह दिया था कि सब मिलकर भोग करो; क्योंकि भिक्षा सुना था। भिक्षा भोजन होता है जिसे नित्य लाते और बांटकर खाते थे। युधिष्ठिर कहते हैं कि मेरी बुद्धि अधर्म में नहीं जाती और मेरी वाणी झूठ नहीं बोलती। इस प्रकार झूठा रोब जमाकर युधिष्ठिर द्रौपदी को पंचभतारी बनाते हैं। उनको लगा कि मैं अकेला द्रौपदी को नहीं पा सकता। अतएव घालमेल का प्रपंच रच डाला जो महा घृणित था। युधिष्ठिर कहते हैं कि मेरी बुद्धि और वाणी सदैव सत्य में रहती हैं, उनमें असत्य का प्रवेश नहीं होता, किंतु ये ही महाशय आगे जुआ खेलकर अपना सारा राज्य, अपने को, अपने भाइयों को, द्रौपदी को जुआ के दावं में लगाकर हार गये और बारह वर्ष वन में भटके और एक वर्ष अज्ञातवास में रहकर राजा विराट की ताबेदारी किये। यह सब भी उनकी धर्म-बुद्धि का परिणाम था। युधिष्ठिर की अन्य अनेक अच्छाइयां हैं, किंतु द्रौपदी को पंचभतारी बनाना तथा जुआ खेलना उनकी सद्बुद्धि का लक्षण नहीं है।

. पांडवों को जीवित तथा प्रतिष्ठित जानकर कौरवों को चिंता

सभी राजाओं को अपने गुप्तचरों से पता चल गया कि अर्जुन ने ही लक्ष्य वेधा है और ये पांडव हैं, अतएव वे सब अपने-अपने देश चले गये। दुर्योधन तथा उनके साथियों को भी यह सब ज्ञात हो गया। वे दुखी होकर पांडवों के विनाश की बात सोचने लगे।

विदुर जी ने सुना कि पांडवों ने द्रौपदी को प्राप्त कर लिया है और धृतराष्ट्र के पुत्र अपना-सा मुंह लेकर लौट आये हैं, तो वे उनके अभिमानी स्वभाव को सोचकर मन-ही-मन प्रसन्न हुए और धृतराष्ट्र के सामने आकर विस्मयसूचक वाणी में कहे—महाराज! हमारा अहोभाग्य है जो कौरवों की वृद्धि हो रही है। उक्त बात सुनकर धृतराष्ट्र प्रसन्न होकर सहसा बोले—अहो भाग्य, अहो भाग्य! वस्तुतः उस अंधे राजा ने यह समझ लिया कि द्रौपदी दुर्योधन को मिली है। इसलिए उन्होंने तुरंत आज्ञा दी कि द्रौपदी के लिए बहुत-से आभूषण मंगाओ और मेरे पुत्र दुर्योधन तथा द्रौपदी को धूमधाम से नगर में लाओ। विदुर ने बताया—द्रौपदी ने पांडवों का वरण किया है। पांडव द्रुपद द्वारा पूज्य होकर उनके यहां रह रहे हैं। यह सुनकर धृतराष्ट्र ने अपनी बदली हुई आकृति छिपाने के लिए कहा—अहोभाग्य-अहोभाग्य! विदुर! यदि पांडव जीवित हैं तो बड़े आनंद की बात है। पांडव मेरे परम प्रिय हैं। यह सुनकर विदुर ने मधुर व्यंग्य में कहा—'राजन, ऐसी बुद्धि आपकी सौ वर्षों तक बनी रहे।' इतना कहकर विदुर अपने घर चले गये।

इसके बाद दुर्योधन और कर्ण धृतराष्ट्र से कहने लगे—पिता जी! विदुर के सामने हम आपका कोई दोष नहीं कह सकते। आप शत्रु की उन्नति अपनी उन्नति मानने लगते हैं। विदुर के सामने हमारे शत्रुओं की बड़ाई करते हैं। आपको जो करना चाहिए वह न करके कुछ और ही करते हैं। हमें ऐसा उपाय करना चाहिए कि पांडव हमारा विनाश न कर सकें।

धृतराष्ट्र ने कहा कि जो तुम लोग चाहते हो वही मैं भी चाहता हूं। परंतु विदुर के सामने मैं अपने मनोभाव को अपनी मुखाकृति से भी नहीं प्रकट करना चाहता। इसलिए मैं विदुर के सामने पांडवों के सद्‌गुणों का बखान करता हूं। जिससे वे मेरे मनोभाव को ताड़ न सकें। अतएव सुयोधन और कर्ण! तुम जो करना चाहते हो मुझे बताओ।

दुर्योधन ने कहा–हमें चाहिए कि कुछ चालाक ब्राह्मणों को पांडवों के पास भेजकर उनमें फूट डलवा दी जाय। राजा द्रुपद और उनके पुत्र को प्रलोभन देकर उनका मन पांडवों से हटा दिया जाय। पांडवों में यह विश्वास उत्पन्न करवाया जाय कि आप लोगों का हस्तिनापुर जाना खतरनाक है, अतः पांचाल देश में ही रहें। पांडवों से द्रौपदी का मन उखाड़ दिया जाय। पांडवों में भीम अधिक बलवान हैं। उन्हीं के बल पर वे घमंड करते हैं; अतः उन्हीं को गुप्त रूप से मरवा दिया जाय। ऐसा भी किया जा सकता है कि सुंदरी युवतियां पांडवों के पास भेजकर उनका मन लुभाया जाय जिससे उनका मन द्रौपदी से हट जाय। अथवा पांडवों को आदर से बुलाकर धोखे से उनको मार दिया जाय। पिता जी! जो उपाय अच्छा लगे उससे शीघ्र पांडवों का अंत कर दिया जाय। मेरी राय अच्छी है या बुरी, आप जानें, अथवा कर्ण! तुम्हारी राय क्या है?

कर्ण ने कहा–यह सब जो आपने राय दी है, अनुचित है। इससे आप पांडवों का निग्रह नहीं कर सकते। वस्तुतः जब तक पांडवों का प्रभाव बढ़ नहीं जाता है तब तक शीघ्र ही हम द्रुपद पर चढ़ाई करके उनको कुचल दें और पांडवों को बांधकर ले आवें। साम, दाम तथा भेद से पांडवों का नाश नहीं कर सकते। पराक्रम से ही उन्हें नष्ट किया जा सकता है।

उक्त बातें सुनकर धृतराष्ट्र ने कर्ण की बड़ी प्रशंसा की। कर्ण! तुम बुद्धिमान हो, वीर हो, अतएव उक्त राय तुम्हारे योग्य है। परंतु मेरा विचार है कि भीष्म, द्रोण, विदुर और तुम लोग एक साथ बैठकर ऐसा विचार करो जो भविष्य के लिए सुखद हो (अध्याय –)।

. भीष्म की सम्मति से पांडवों को आधा राज्य दिया गया

भीष्म ने धृतराष्ट्र से कहा–जब से मैंने सुना था कि वारणावत के लाक्षागृह में कुंती सहित पांडव जल मरे, तब से मैं मारे लज्जा के किसी की तरफ सिर उठाकर देख नहीं पाता था। प्रसन्नता की बात है कि वे जीवित हैं। दुर्योधन! जैसे राज्य पर तुम्हारा अधिकार है, वैसे पांडव का भी है। अतएव उनको आधा राज्य दे दिया जाय। कीर्ति खोकर जीना बेकार है।

द्रोणाचार्य ने कहा कि एक प्रियभाषी दूत द्रुपद के पास भेजकर पांडवों को उपहार दिलवाया जाय और उन्हें सत्कारपूर्वक बुलाकर उनको आधा राज्य दे दिया जाय। कर्ण ने द्रोणाचार्य के प्रस्ताव का विरोध किया। इस पर द्रोणाचार्य ने

कर्ण को फटकारा। विदुर ने भीष्म और द्रोणाचार्य का समर्थन किया।

धृतराष्ट्र ने कहा–विदुर! भीष्म और द्रोणाचार्य ने जो कुछ कहा और जो तुम राय देते हो, वह उत्तम है। पांडव जैसे पांडु के पुत्र हैं वैसे मेरे हैं। तुम स्वतः पांचाल देश जाओ और पांडवों को आदर से लाकर उनको आधा राज्य दे दिया जाय। अंततः पांडव हस्तिनापुर लाये गये। उनको आधा राज्य दिया गया। उन्होंने इंद्रप्रस्थ नगर का निर्माण करवाया और उसमें रहने लगे। पास में खांडव वन था, वे वहां भी विहार करते थे (अध्याय –)।

. पांडवों का द्रौपदी के साथ रहने का नियम

पांडव इंद्रप्रस्थ में रहने लगे। एक दिन नारद आये। उन्होंने पांडवों से कहा कि तुम लोग द्रौपदी के लिए ऐसा नियम बना लो कि जिससे आपस में फूट न हो। राक्षसवंशी सुंद और उपसुंद दो भाई थे। उनका परस्पर बड़ा प्रेम था; परंतु तिलोत्तमा नाम की एक सुंदरी को लेकर वे आपस में ऐसी मारा-मारी किये कि दोनों मर गये।

उपर्युक्त बातें सुनकर नारद जी के सामने पांडवों ने नियम बनाया कि द्रौपदी के साथ एकांत में रहने वाले हम में से एक भाई को यदि दूसरा देख ले, तो वह बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्यपूर्वक वन में निवास करे (अध्याय –)।

मीमांसा

नारद को कहीं भी टपका लिया जाता है। खास बात है, पांडवों का द्रौपदी के लिए नियम। वह होना ही चाहिए। बारह वर्ष ब्रह्मचर्यपूर्वक वनवास बहुत अस्वाभाविक लगता है, परंतु इसमें कारण है जो आगे स्पष्ट हो जायेगा।

. अर्जुन द्वारा नियम-भंग और उनका बारह वर्ष का वनवास

एक दिन की बात है, संभवतः रात का समय था। एक ब्राह्मण की गायें चोरों द्वारा हांक ली गयीं। वह चिल्लाया। अर्जुन ने सुना तो उनको दया आयी, परंतु अस्त्र-शस्त्र वहां थे जहां युधिष्ठिर द्रौपदी के साथ थे। अर्जुन ने सोचा कि मुझे भले बारह वर्ष वनवास करना पड़े, परंतु दुखी का दुख दूर करना हमारा

धर्म है। अतएव अर्जुन युधिष्ठिर के भवन में जाकर अस्त्र-शस्त्र उठा लाये और चोरों को खदेड़ कर ब्राह्मण की गायें उसे प्राप्त करायीं।

अर्जुन ने युधिष्ठिर के पास जाकर नियम-भंग के अपराध में मिलने वाले दंड को स्वीकारा और उनसे आग्रह किया कि मुझे बारह वर्ष वनवास की आज्ञा दें। युधिष्ठिर दुखी हो गये। उन्होंने कहा–छोटा भाई यदि अपनी पत्नी के पास है, तो बड़े भाई का वहां जाना अपराध है, किंतु यदि बड़ा भाई अपनी पत्नी के पास है तो वहां छोटे भाई का जाना अपराध नहीं है। अर्जुन ने कहा–भैया! आपसे ही मैंने सुना है कि धर्म के आचरण में बहानेबाजी नहीं चलती। अंततः युधिष्ठिर को आज्ञा देना पड़ा और अर्जुन बारह वर्ष के लिए वनवास में निकल पड़े (अध्याय)।

. अर्जुन की तीर्थ यात्रा और उलूपी तथा चित्रांगदा से परिणय

अर्जुन इंद्रप्रस्थ से निकलकर गंगाद्वार (हरद्वार) पहुंचे। वे वहां गंगा में नहाने चले, तो पानी के नीचे से एक नागकन्या ने जिसका नाम उलूपी था अर्जुन के प्रति मोहित होकर उन्हें नीचे खींच लिया। अर्जुन ने नागराज के भवन में रहकर उलूपी को गर्भवती किया और फिर जल के ऊपर उठ आये। पीछे उलूपी से इरावन नाम का पुत्र पैदा हुआ जो अर्जुन की देन था।

अर्जुन हिमालय के बहुत तीर्थों में घूमते हुए अंग, बंग, कलिंग होते हुए मणिपुर पहुंचकर राजा चित्रवाहन की पुत्री चित्रांगदा से विवाह किये और वहां तीन वर्ष निवास किये। अर्जुन द्वारा चित्रांगदा को बभ्रुवाहन नाम का पुत्र पैदा हुआ। इसके बाद अर्जुन दक्षिण दिशा के तीर्थों में निकल पड़े।

अर्जुन दक्षिण दिशा के सौभद्र तीर्थ में स्नान करने के लिए जल में प्रवेश किये कि उनके पैर को एक घड़ियाल ने पकड़ लिया। परंतु वे उछलकूद कर घड़ियाल को लिये-दिये बाहर आ गये। तो आश्चर्य हुआ कि वह घड़ियाल एक सुंदरी युवती हो गया। कह सकते हैं कि घड़ियाल नदारद हो गया और वहां वस्त्राभूषणों से सजी-धजी एक सुंदरी युवती उपस्थित हो गयी। उस सुंदरी का नाम वर्गा था। वह अप्सरा थी।

वस्तुतः बात ऐसी बन आयी कि एक बार वर्गा, सौरभेयी, समीची, बुदबुदा और लता–ये पांच अप्सरायें एक वेदपाठी ब्राह्मण को रिझाने लगीं। उसको

बाधा लगी, अतएव उसने इन पांचों को शाप दे दिया कि तुम घड़ियाल बन जाओ और सौ वर्ष तक जल में रहो। नारद जी ने इन अप्सराओं को बताया कि समय से अर्जुन आयेंगे तो उनके संपर्क से तुम सब घड़ियाल से पुनः अप्सराएं बन जाओगी। अंततः अर्जुन की कृपा से वे पांचों घड़ियाल पुनः अप्सरा रूप में होकर अपनी स्वाभाविक दशा में आ गये। अर्जुन ने इन अप्सराओं से कोई बच्चा नहीं पैदा किया (अध्याय –)।

मीमांसा

अर्जुन का बारह वर्ष वनवास कराने का हेतु है इन कथाओं को उनके साथ जोड़ना और उन्हें महिमा मंडित करना। उनका बारह वर्ष का ब्रह्मचर्यपूर्वक वनवास की शर्त में ब्रह्मचर्य की पोलपट्टी खुल ही गयी है। आगे और खुलने वाली है।

. सुभद्रा–हरण

अर्जुन दक्षिण के तीर्थों से मुड़कर पश्चिमी तीर्थों में पहुंच गये और घूमते–घूमते प्रभास तीर्थ में पहुंच गये। श्रीकृष्ण अर्जुन का आना सुनकर उनसे आकर मिले और उन्हें रैवतक पर्वत और द्वारकापुरी ले गये। रैवतक पर्वत पर यादवों का बड़ा उत्सव चल रहा था। उस मेला में कृष्ण की सगी बहिन सुभद्रा भी आयी थी। श्रीकृष्ण के साथ अर्जुन घूम रहे थे। अर्जुन ने सुभद्रा को देखा तो वे उस पर काम–मोहित हो गये। श्रीकृष्ण ने अर्जुन की मनोदशा को भांप लिया। फिर वे अर्जुन का मजाक उड़ाते हुए बोले–भारत! यह क्या, वनवासी का मन भी इस प्रकार कामोन्माद में पड़ता है–*वनेचरस्य किमिदं कामेनालोड्यते मनः* (आदि. ,)? यदि तुम सुभद्रा को चाहते हो तो मैं पिता जी से कहूंगा। अर्जुन ने कहा कि हे कृष्ण! यदि तुम्हारी बहिन सुभद्रा मेरी पत्नी हो जाय तो मैं अपने को सफल मनोरथ समझूंगा।

श्रीकृष्ण ने कहा कि सुभद्रा के वर के लिए यदि स्वयंवर रचा गया तो उसमें पता नहीं उसका मन किस पर रीझ जाय। अतएव तुम ऐसा करो कि सुभद्रा को उड़ा ले जाओ। क्षत्रिय कन्याओं का अपहरण करके विवाह करते ही हैं। लिखा है कि अर्जुन ने शीघ्रगामी दूत इंद्रप्रस्थ भेजकर युधिष्ठिर से आज्ञा ले ली (फोन तथा मोबाइल का समय तो था नहीं)। खैर, अर्जुन ने सुभद्रा को गोद में उठाकर अपने रथ में डाल लिया और इंद्रप्रस्थ का रास्ता पकड़ा।

भीड़ में हल्ला मच गया, भगदड़ हो गयी। सैनिक द्वारका की तरफ दौड़ चले। यादव यह घटना सुनकर खलबला गये, और अस्त्र-शस्त्र सम्हालने लगे कि अर्जुन पर हमला करके सुभद्रा को छीन लिया जाय। बलराम जी ने यादवों से कहा–मूर्खो! श्रीकृष्ण चुप बैठे हैं। उनके मन की बात जाने बिना तुम लोग क्यों व्यर्थ गर्ज रहे हो? इसके बाद बलराम ने श्रीकृष्ण से कहा–"यह अनर्थ कांड होते हुए देखकर तुम क्यों चुप बैठे हो? याद रखो, तुम्हारे संतोष के लिए हम लोगों ने द्वारका में अर्जुन का सत्कार किया है, अन्यथा वह कुल-बोरन सत्कार के योग्य नहीं है। अपने को कुलीन मानने वाला कौन ऐसा मनुष्य है जो ऐसा घृणित कार्य करे कि जिस पात्र में भोजन करे उसी में छेद करे। जैसे सर्प किसी के पैर का ठोकर नहीं सह सकता, वैसे हम यह अपमान कैसे सह सकते हैं? अर्जुन का अन्याय हमारे लिए असहनीय है। मैं अकेला कुरुवंश का विनाश कर सकता हूं।"

बलराम की गर्जना सुनकर भोज, वृष्णि, अंधक वंश के समस्त यादवों ने उनकी बात का समर्थन किया। श्रीकृष्ण ने सबको समझा-बुझाकर शांत कर दिया, और अर्जुन को रास्ते से लौटाकर उनका सुभद्रा के साथ विवाह करवा दिया। वे एक वर्ष तक अपनी ससुराल द्वारका में सुभद्रा के साथ रहे। इसके बाद वे पुष्कर तीर्थ लौट आये, और वनवास का शेष समय वहीं रहकर बिताये। बारह वर्ष पूरा होने पर अर्जुन खांडवप्रस्थ आये और माता कुंती, भाइयों तथा द्रौपदी से मिले। द्रौपदी ने अर्जुन को फटकारा, क्योंकि अर्जुन जहां गये, एक नयी पत्नी बनाते रहे। अर्जुन ने द्रौपदी से क्षमा मांगी और सुभद्रा को ग्वालिन के वेष में महल में भेजा। कुंती, द्रौपदी आदि सभी ने सुभद्रा को स्नेह दिया। इसके बाद यादवों सहित श्रीकृष्ण बहुत-सा दहेज लेकर इंद्रप्रस्थ आये। अर्जुन द्वारा इसी सुभद्रा से अभिमन्यु का जन्म हुआ था। द्रौपदी ने अपने पांच पतियों से पांच पुत्र को जन्म दिया जो इस प्रकार हैं–युधिष्ठिर से प्रतिविन्ध्य, भीमसेन से सुतसोम, अर्जुन से श्रुतकर्मा, नकुल से शतानीक और सहदेव से श्रुतसेन (अध्याय -)।

मीमांसा

कैसा अद्‌भुत समय था! बड़े-बड़े राजे-महाराजे कन्याओं का अपहरण करके विवाह करते थे। श्रीकृष्ण महाराज तो अद्‌भुतों में अधिक अद्‌भुत हैं जो अपनी बहिन का ही अपहरण करा देते हैं।

. खांडववन का दाह

इंद्रप्रस्थ में अर्जुन के साथ श्रीकृष्ण रह रहे थे। एक दिन गरमी अधिक थी। अर्जुन, श्रीकृष्ण, द्रौपदी, सुभद्रा आदि यमुना में जल-विहार करने के लिए चले। ये सब यमुनातट पर थे। उसी समय एक ब्राह्मण आया। वह अग्नि था। श्वेतिक नाम के राजा ने ऐसा यज्ञ किया था जिसमें हवनकुंड में घी की धारा अखंडरूप से बारह वर्षों तक गिरती रही। उसको पीते-पीते अग्निदेव को अजीर्ण हो गया था और वे बीमार होकर पीले पड़ गये थे। अग्निदेव ने कहा कि अब मेरी बीमारी तब दूर होगी जब खांडववन का दाह होगा और उसमें रहने वाले नागों, दैत्यों और जानवरों की देहें जलेंगी, तब उन्हें खाकर मैं तृप्त होऊंगा।

अग्निदेव ने कहा कि जब मैं खांडववन जलाता हूं तब इंद्र आकर जल वर्षाने लगते हैं। इसलिए खांडववन नहीं जलता। हे श्रीकृष्ण और अर्जुन! आप वीर हैं। आप इंद्र का सामना करें और वन को चारों ओर से रोककर सभी प्राणियों को आग में जला दें। कोई भागकर बचने न पावे।

श्रीकृष्ण और अर्जुन ने कहा कि हमारे पास महत्त्वपूर्ण धन्वा-बाण आदि नहीं हैं। तब अग्नि ने वरुण की सहायता से अर्जुन को गांडीव नाम का अमोघ धनुष, अक्षय तरकश, ध्वज पर वानर चिह्नित रथ दिया और श्रीकृष्ण को चक्र दिया। फिर श्रीकृष्ण और अर्जुन ने खांडववन का दाह किया और चारों तरफ से उसे घेरकर उसमें रहने वाले प्राणियों को जला डाला। उस समय तक्षक खांडववन में नहीं था। वह कुरुक्षेत्र चला गया था। मय नाम का दानव जो प्रसिद्ध शिल्पी था, उसने अर्जुन की शरण ली, अतएव अर्जुन ने उसे बचा लिया।

इंद्र आदि देवता खांडववन बचाने के लिए श्रीकृष्ण और अर्जुन से युद्ध किये, परंतु वे सफल नहीं हो रहे थे। तब आकाशवाणी हुई कि श्रीकृष्ण नारायण हैं और अर्जुन नर हैं। इनको तुम देवता परास्त नहीं कर सकते हो। अतएव देवता सहित इंद्र स्वर्ग को लौट गये (अध्याय -)।

मीमांसा

अग्नि को याज्ञिक घी पीते-पीते अजीर्ण हो गया था। वे बीमार होकर पीले पड़ गये थे। उन्होंने श्रीकृष्ण और अर्जुन से खांडववन जलाकर उससे अपनी तृप्ति की कामना की; यह सब पौराणिक प्रपंच है। अग्नि जड़ है। वह मनुष्य

बनकर किसी से बात क्या करेगा? खास बात है कि अर्जुन और श्रीकृष्ण ने खांडववन का दाह किया।

श्री वासुदेवशरण अग्रवाल लिखते हैं–"ज्ञात होता है कि इस कथा के पीछे ऐतिहासिक अनुश्रुति का कोई तथ्य छिपा है। युधिष्ठिर की इंद्रप्रस्थ राजधानी के पास ही खांडववन में नाग या मुंडा जाति की एक बस्ती बच गयी थी। नागों का कुरुवंश के साथ पुराना वैर चला आता था, जिसने आगे चलकर परीक्षित और जनमेजय के समय उग्र रूप धारण किया। उस उपनिवेश को निर्मूल करके इंद्रप्रस्थ के राज्य को निष्कंटक बनाना यही कृष्ण और अर्जुन का उद्देश्य था, जो खांडवदाह की इस कथा के मूल में है। उसी खांडववन में तक्षक के घर में मय असुर भी छिपा हुआ था। इस विपत्ति के समय अपने प्राण बचाने के लिए वह अर्जुन की शरण में आया और अर्जुन ने उसे अभय–दान दिया।

इस प्रकार कुरुवंश और असुरवंश में मेल हो गया। कुछ समय के लिए नाग भी हततेज हो गये। यह देखकर नाग और असुरों के पक्षपाती इंद्र ने कृष्ण और अर्जुन के पास आकर संधि कर ली। इस संघर्ष में इंद्र और अग्नि आर्यों के इन दो बड़े देवों में एक शाखा के अधिष्ठाता इंद्र नाग और असुरों के पक्षपाती थे और दूसरी शाखा के अधिष्ठाता अग्नि पुरुवंश के साथ थे। इस प्रकार इस कथानक से प्राक्कालीन जातीय संघर्षों के धुंधुले इतिहास पर प्रकाश की कुछ किरणें स्फुट होती हैं।"

आर्यों और नागवंशियों का यह युद्ध संभवत: महाभारत काल के बहुत पहले का हो, और इसकी कथा पुराकाल से तैरते–तैरते श्रीकृष्ण और अर्जुन से जुड़ गयी और इसने महाभारत में अपना स्थान ग्रहण कर लिया। आकाशवाणी कराकर लेखक अर्जुन और श्रीकृष्ण को नर और नारायण की पदवी देता है। श्रीकृष्ण की भक्ति के विकास के बाद यह बात आती है और श्रीकृष्ण के साथ अर्जुन को भी उठाया जाता है। आकाशवाणी फर्जी कथन है। श्रीकृष्ण को ईश्वर मानने की बात ईसा के चार सौ वर्ष पूर्व से प्रचलित हुई और गुप्तकाल तक फलती–फूलती रही।

. **भारत सावित्री, पृष्ठ , संस्करण ई०, सस्ता साहित्य मंडल।**

सद्गुरवे नमः

महाभारत मीमांसा

दूसरा : सभा पर्व

. मय द्वारा सभाभवन का निर्माण

श्रीकृष्ण और अर्जुन बैठे हैं। मय नाम के असुर ने अर्जुन से कहा कि खांडववन-दाह के समय आपने मेरे ऊपर कृपाकर मुझे बचा लिया। अतएव आप बताइए कि मैं आपकी क्या सेवा करूं? अर्जुन ने कहा कि तुमने मेरा उपकार मानकर कृतज्ञता प्रकट की है यह बहुत है। इसमें बदला हो चुका। तुम्हारा कल्याण हो। तुम जाओ। मुझ पर प्रेम बनाये रखना। मैं भी तुम पर प्रेम रखूंगा। मय ने कहा कि यह आपकी महानता है, परंतु मैं आपके लिए कुछ सेवा करना चाहता हूं। मैं दानवों का विश्वकर्मा एवं शिल्पविद्या का पंडित हूं, इसलिए मैं आपके लिए कुछ निर्माण कार्य करना चाहता हूं। अर्जुन ने कहा कि मैंने तुम्हारी प्राण रक्षा की है, इसलिए तुम मेरे प्रति प्रत्युपकार करना चाहते हो, इसलिए मैं तुमसे कोई काम नहीं करा पाऊंगा। यदि तुम करना चाहते हो, तो श्रीकृष्ण का कुछ काम कर दो।

इसके बाद मय ने श्रीकृष्ण से काम बताने का अनुरोध किया। श्रीकृष्ण ने कुछ सोचकर कहा–तुम राजा युधिष्ठिर के लिए जैसा अच्छा समझो एक सभाभवन बना दो। वह आश्चर्यजनक हो और उसकी कोई नकल न कर सके। इसके बाद मयासुर को अर्जुन और श्रीकृष्ण ने राजा युधिष्ठिर से मिलाया। मयासुर ने सभाभवन की नींव डाली जिसका घेरा दस हजार किष्कु (हाथ) था।

श्रीकृष्ण द्वारका जाने लगे, तो युधिष्ठिर ने रथचालक दारुक को हटाकर स्वयं घोड़ों की लगाम सम्हाली और अर्जुन चंवर डुलाने लगे। कुछ दूर जाकर युधिष्ठिर आदि लौट आये और श्रीकृष्ण द्वारका चले गये।

मयासुर ने चौदह महीने में सभाभवन तैयार कर दिया। इसके साथ उसने अर्जुन को एक महत्त्वपूर्ण गदा और देवदत्त नामक शंख दिया।

इस सभाभवन में जल का थल और थल का जल भी दिखता था। सभा-भवन तैयार करके मयासुर ने अर्जुन को हृदय से लगाकर प्रेम प्रकट किया और चला गया (अध्याय –)।

मीमांसा

असुर तथा दानव-वंश के लोग भवन आदि निर्माण करने में कुशल थे। वैदिक आर्य लकड़ी गाड़कर फूस के छप्पर छाते थे। इसलिए पुरानी कथाओं में निर्माण-कार्य असुरों द्वारा चित्रित होता है।

. नारद का युधिष्ठिर को राजनीति का उपदेश

नारद आये, युधिष्ठिर की सभा में बैठे और आगत-स्वागत के बाद प्रश्न वाचक संज्ञा में राजनीति के उपदेश करने लगे। उन्होंने युधिष्ठिर से कहा–राजन! क्या तुम्हारा धन निर्वाह में पूरा पड़ जाता है? क्या तुम्हारा मन धर्म में प्रसन्न होकर लगता है? तुम मन से दुखी तो नहीं रहते हो? क्या तुम प्रजा के साथ उत्तम व्यवहार करते हो? तुम धन के लोभ में पड़कर धर्म को, केवल धर्म में लगकर धन को या आसक्ति-वश होकर कामभोग में धर्म और धन की हानि तो नहीं करते हो? क्या तुम्हारे राज्य के धनी लोग बुरे व्यसनों से बचकर रचनात्मक काम में लगे रहते हैं? क्या तुम शत्रुओं के गुप्तचर से सावधान रहते हो? अपनी मंत्रणा को गुप्त रखते हो न? क्या रात के पिछले भाग में जागकर अपने आवश्यक कर्तव्य पर सोचते हो? श्रमजीवी किसान, मजदूर, शिल्पी आदि का ख्याल तो रखते हो न? इन्हीं पर उन्नति निर्भर है। तुम्हारे किसी कार्य के सिद्ध होने के पहले उसे लोग जान तो नहीं लेते? अधिकारी और नौकर को समय पर वेतन और भोजन देते हो न?

नारद ने आगे कहा–राजन! तुम अपने मन-इंद्रियों को स्ववश रखते हो न? तुम नास्तिकता, झूठ, क्रोध, प्रमाद, दीर्घसूत्रता, ज्ञानियों की उपेक्षा, आलस्य, विषयासक्ति, मूर्खों से विचार-विमर्श, कार्य करने में टालमटोल, मंत्रणा की असुरक्षा, मांगलिक कार्य न करना आदि दोषों में तो नहीं पड़े रहते? तुम वृद्धों की अर्थ और धर्मयुक्त बातें सुनते हो न? उपकार करने वालों तथा अच्छे कार्य करने वालों की लोगों में प्रशंसा करते हो न?

इस प्रकार सौ से अधिक श्लोकों में नारद ने प्रश्न के लहजे में युधिष्ठिर को उपदेश दिया है। अंत में युधिष्ठिर ने कहा–आपके उपदेश के अनुसार मैं आचरण करूंगा। आपके उपदेश से मेरी प्रज्ञा बढ़ गयी है (अध्याय)।

मीमांसा

वस्तुत: लेखक अवसर देखता है कि कहां अपने काव्य के पात्रों से क्या कहलाना है, वहां वह अपनी जानकारी को उसके द्वारा उड़ेल देता है। नारद को बहुत जगह घसीट लिया जाता है। किंतु इन माध्यमों से जो काम की बातें सामने आती हैं, वे पाठकों के लिए कल्याणकारी होती हैं।

इसी तरह वाल्मीकि रामायण में चित्रकूट में भरत के मिलने पर श्रीराम से राजनीतिक उपदेश प्रश्नवाचक संज्ञा में दिलाया गया है।

. राजसूय यज्ञ का संकेत

युधिष्ठिर ने नारद से पूछा कि क्या महाराज इस सभागार के समान आपने अन्य सभागार देखे हैं? नारद ने कहा कि आपके सभाभवन के समान इस पृथ्वी पर सभाभवन मैंने न देखा है और न सुना है। हां इंद्र, यम, वरुण, कुबेर तथा ब्रह्मा के सभागार विलक्षण हैं जो सौ–सौ डेढ़–डेढ़ सौ योजन की लंबाई–चौड़ाई में हैं।

इसके बाद एक कथा–पुछल्ला और लगा है। नारद हरिश्चंद्र राजा की बड़ाई करते हैं और बताते हैं कि वे स्वर्ग में इंद्र की सभा में विराजते है। इसी दौरान नारद यह भी कहते हैं कि तुम्हारे दिवंगत पिता राजा पांडु से भी मेरी स्वर्ग में मुलाकात हुई है। उन्होंने तुम्हारे लिए अपना संदेश भेजा है कि युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ करें (अध्याय –)।

मीमांसा

इंद्र, यम, वरुण आदि वैदिक प्राकृतिक देवता हैं जो जड़ हैं। कुबेर, ब्रह्मा आदि पौराणिक काल्पनिक देवता हैं। पृथ्वी से अलग स्वर्ग कहीं नहीं है जहां से नारद पांडु का संदेश लावें। मर जाने के बाद कोई अपना संदेश किसी को कभी नहीं दे सका है।

. राजसूय यज्ञ के लिए श्रीकृष्ण की सम्मति

नारद से राजसूय यज्ञ की बात सुनकर युधिष्ठिर के मन में उसको करने के लिए उत्साह जगा। उन्होंने पुरोहित धौम्य और वेदव्यास से राय ली, किंतु श्रीकृष्ण से राय लेना ही उत्तम समझा। अतएव उन्होंने द्वारका से श्रीकृष्ण को बुला लिया और उनसे राय मांगी। उन्होंने कहा–श्रीकृष्ण! मैं राजसूय यज्ञ करना चाहता हूं, परंतु इतना बड़ा काम केवल चाहने से नहीं होगा। उसके लिए उपाय करना होगा। आप सब जानते हैं, अतएव मुझे राय दीजिए।

श्रीकृष्ण ने कहा–राजन! पूर्वकाल में जब परशुराम जी ने क्षत्रियों का संहार किया, तब बचे-खुचे क्षत्रिय जो लुक-छिपकर रह गये, वे पहले के क्षत्रियों से निम्नतर हैं। इन क्षत्रियों ने एक नियम बना लिया है कि हम में से जो सभी क्षत्रियों को जीत ले वह सम्राट है। आज-कल सब क्षत्रिय अपने को पुरुरवा तथा इक्ष्वाकु की संतान मानते हैं। पुरुरवा और इक्ष्वाकु के वंश में जो राजा हैं उनके एक सौ कुल विद्यमान हैं। आज-कल ययाति के कुल में गुण की दृष्टि से भोजवंशियों का ही विस्तार है। सभी क्षत्रिय उनका आश्रय लेते हैं। परंतु वर्तमान मगध-नरेश जरासंध सभी राजाओं के ऊपर हो गया है और वह सम्राट है। इस समय वह सबसे प्रबल और उच्च सम्राट है। मेरा फूफेजात भाई चेदि नरेश शिशुपाल स्वयं बलवान होकर भी जरासंध का सेनापति बना हुआ है। महाबली कुरुषराज दंतवक्र भी जरासंध के सामने शिष्य की तरह खड़ा रहता है। महान योद्धा हंस और डिंभक भी जरासंध की शरण में हैं। दंतवक्र, करभ और मेघवाहन राजमुकुट धारण करके भी जरासंध के सामने नतमस्तक हैं। मुर और नरक देश के शासक वृद्ध यवनाधिपति भगदत्त जो आपके पिता के मित्र रहे हैं, जरासंध के सामने नतमस्तक हैं। यद्यपि उनका स्नेह आपके प्रति है, परंतु उसे वे बाहर प्रकट नहीं करते।

श्रीकृष्ण ने आगे कहा–जिसे मैंने अभी मारा नहीं है, उपेक्षा कर रखा है, जो खोटी बुद्धि का है, जो चेदि देश में पुरुषोत्तम माना जाता है, जो अपने को पुरुषोत्तम ही बताता है, इतना ही नहीं, जो मेरे शंख-चक्र चिह्नों को भी धारण करता है, वंग, पुंड्र और किरात देश का जो राजा है, और संसार में वासुदेव के नाम से प्रसिद्ध हो रहा है, वह शक्तिशाली राजा पौंड्रक भी जरासंध के साथ ही मिला है। जो पांड्य, क्रथ तथा कैशिक देशों के विजेता, बलवान और बड़े देश के राजा हैं वे भीष्मक जो मेरे श्वसुर हैं, मगध-नरेश जरासंध के ही भक्त हैं। वे अपने बल और कुल की उपेक्षा करके केवल जरासंध के उज्ज्वल यश पर मुग्ध हैं। उत्तर दिशा में निवास करने वाले

भोजवंशियों के अठारह कुल जरासंध के डर से भागकर पश्चिम दिशा में रहने लगे हैं। शूरसेन, भद्रकार, बोध, शाल्व, पटच्चर, सुस्थल, सुकुट्ट, कुलिंद, कुंति और शाल्वायन आदि राजे-महाराजे जरासंध के डर से दक्षिण दिशा को भाग गये हैं। जो राजे-महाराजे दक्षिण पांचाल तथा पूर्वी कुंतिप्रदेश में रहते थे, सभी क्षत्रिय कोशल, मत्स्य, संन्यस्तपाद आदि क्षत्रिय जरासंध के भय से दक्षिण दिशा को भाग गये हैं।

श्रीकृष्ण ने आगे और बताया–कुछ दिन पहले मेरे मामा कंश ने यादवों को कुचला और जरासंध की दो पुत्रियों अस्ति और प्राप्ति से अपना विवाह किया। ये दोनों सहदेव की छोटी बहिनें हैं। मेरा मामा कंश जरासंध के ही बल पर अपने जाति-भाइयों को अपमानित कर स्वयं प्रधान बन बैठा। कंश से पीड़ित होकर भोजराज वंश के बड़े-बूढ़ों ने अपने जाति-भाइयों की रक्षा के लिए हमसे प्रार्थना की। तब मैंने आहुक की पुत्री सुतनु का विवाह अक्रूर से करा दिया और बलराम को साथी बनाकर जाति भाइयों का काम किया और बलराम और मैंने कंश और सुनामा को मार डाला। ऐसा करने पर कंश का भय तो समाप्त हो गया, परंतु जरासंध हम पर कुपित होकर हमसे बदला लेने के लिए तैयार हो गया। हम भोज वंश के अठारह कुल वाले मिलकर विचार किये कि हम तीन सौ वर्षों में भी जरासंध पर विजय नहीं कर सकते। क्योंकि जरासंध के सहायक हंस और डिंभक भी हैं। हंस, डिंभक तथा जरासंध, ये तीन यदि खड़े हैं तो इनके सामने तीन लोक नतमस्तक हो जायेगा। कंश की विधवा पत्नियां एवं जरासंध की पुत्रियां अस्ति और प्राप्ति के उकसाने से कि कृष्ण से बदला लेना चाहिए, जरासंध ने मथुरा पर सत्रह चढ़ाइयां कीं। हम लोग जो पहले गुप्त मंत्रणा किये थे कि हम तीन सौ वर्षों तक लड़ें तो भी जरासंध पर विजय नहीं कर पायेंगे, उदास हो गये। अतएव हम मथुरा से भाग खड़े हुए। उस समय हमने मथुरा की विशाल संपत्ति परस्पर बांटकर थोड़ी-थोड़ी करके भाई-बंधु एवं पुत्रों के साथ जरासंध के भय से भाग निकले और पश्चिम दिशा की शरण ली। उस समय हम लोग रैवत पर्वत पर निवास किये। फिर द्वारका पुरी में रहने लगे। हम जरासंध के अपराधी हैं (क्योंकि उनकी पुत्रियों को विधवा किये हैं)। इसलिए शक्तिशाली होकर भी हमें भागना पड़ा।

श्रीकृष्ण ने आगे कहा–राजन! आप सम्राट बनने योग्य हैं, परंतु जब तक जरासंध जीवित है तब तक आप राजसूय यज्ञ नहीं कर सकते। जरासंध ने राजाओं को जीतकर वैसे ही कैद कर रखा है, जैसे सिंह ने पर्वत की गुफा में

हाथियों को रोक रखा हो। उसने एक–एक कर राजाओं को जीता और उनके एक बड़े समुदाय को कैद कर रखा है। उस समय हम भी जरासंध के भय से ही पीड़ित होकर मथुरा छोड़कर द्वारका चले गये, और अब तक वहीं रहते हैं। अतएव जरासंध को मारने का उपाय सोचिए। उसके मरे बिना आपका राजसूय यज्ञ नहीं हो सकता। मेरा मत यही है, परंतु आप जैसा सोचें और करें। अपनी राय समय से हमें बतावें (अध्याय –)।

. युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन और श्रीकृष्ण के विचार तथा जरासंध का जन्म

युधिष्ठिर ने कहा–आज–कल तो घर–घर राजा हैं। सब अपना प्रिय कार्य करते हैं; परंतु सम्राट होना बड़ा कठिन है। दूसरे के प्रभाव को समझने वाला अपनी प्रशंसा नहीं कर सकता। पृथ्वी विशाल है, रत्नों से भरी है। मनुष्य इससे हटकर ही अपना कल्याण कर सकता है। मैं तो मन–इंद्रियों के संयम को ही उत्तम मानता हूं। उसी से हमारा कल्याण होगा। राजसूय यज्ञ करके भी उसके द्वारा ब्रह्मलोक की प्राप्ति नहीं हो सकती। क्या इस दुनिया में कभी कोई सर्वश्रेष्ठ भी हो सकता है? श्रीकृष्ण! हम भी जरासंध के भय से शंकित रहते हैं। हे कृष्ण! जब आप ही जरासंध से भयभीत हैं, तब मैं किस खेत की मूली हूं? हे कृष्ण! आपसे, बलराम से, भीम से अथवा अर्जुन से जरासंध मारा जा सकता है कि नहीं; इस संदेह में मेरा मन घूमता रहता है।

भीम ने कहा–श्रीकृष्ण में नीति है, मुझ में बल है और अर्जुन में विजय की शक्ति है। अतएव हम तीनों मिलकर जरासंध को ठिकाने लगा सकते हैं। श्रीकृष्ण! आप हमारे रक्षक हैं, हमें भय कैसा?

युधिष्ठिर ने कहा–मैं सम्राट बनने के स्वार्थ में पड़कर आप लोगों को जरासंध के पास कैसे भेज दूं? भीम और अर्जुन ये दोनों मेरे नेत्र हैं और श्रीकृष्ण! आपको मैं अपना मन मानता हूं। अपने नेत्र और मन को खोकर जीवन का क्या मूल्य रहेगा? जरासंध का बल और सेना का पार पाना असंभव है। अतएव हमें राजसूय यज्ञ का विचार छोड़ देना चाहिए। इससे मेरा मन उदास हो गया है। इसके बाद अर्जुन ने अपना उत्साह दिखाया। उन्होंने कहा कि यदि हम राजसूय यज्ञ नहीं करते हैं तो कायर सिद्ध होंगे। तब तो शांति–इच्छुक संन्यासियों का गेरुआ वस्त्र ही पहन लेना चाहिए।

श्रीकृष्ण ने अर्जुन की बातों का समर्थन करके कहा–हम यह नहीं जानते कि मृत्यु रात में आयेगी या दिन में या कब आयेगी। हमने यह भी नहीं सुना है कि युद्ध न करने से कोई अमर हो गया है। हमें कदम उठाना चाहिए।

युधिष्ठिर ने लगे हाथ श्रीकृष्ण से यह भी पूछ लिया कि यह जरासंध कौन है? यह इतना बलवान कैसे है? श्रीकृष्ण ने कहा–मगधनरेश बृहद्रथ की दो पत्नियां थीं जो काशीनरेश की कन्याएं थीं। राजा को उनसे कोई संतान नहीं हुई। वे बूढ़े हो गये। एक मुनि से उन्होंने अपना दुखड़ा रोया। मुनि ने आम का एक फल दिया। राजा ने उसे रानियों को दिया। रानियों ने उसे फाड़कर आधा-आधा खा लिया। उनको गर्भ रह गया और समय से दोनों को बच्चे का आधा-आधा भाग पैदा हुआ। रानियों ने भयभीत होकर उसे फेंकवा दिया। जरा नाम की एक राक्षसी थी। वह रक्त-मांस खाती थी। उसने उसे देखा, तो उसे ले जाने की सुविधा से एक में जोड़ दिया, तो वह एक सुंदर बालक बन गया और जोर से रोने लगा। उस राक्षसी ने उस बच्चे को रानियों को दे दिया। वही जरा-संध है। जरा नाम की राक्षसी थी, उसने संध कर दिया, जोड़ दिया, इसलिए वह जरासंध हो गया। जब वह जवान हुआ, तब राजा बृहद्रथ उसे राज्य देकर वन में तपस्या करने चले गये। जरासंध के दो प्रधानमंत्री हैं हंस और डिंभक, ये बड़े बलवान हैं (अध्याय -)।

मीमांसा

फल खाने से स्त्री को गर्भ नहीं रहता। आधा-आधा बच्चा नहीं होता और उसे जोड़ने से एक बच्चा नहीं होता है। पौराणिक गाथाएं ऐसे ही भ्रामक होती हैं जो केवल कल्पित और ज्ञान-विज्ञान-विरोधी होती हैं। लेखक ने जरासंध नाम की अस्वाभाविक व्याख्या कर डाली।

युधिष्ठिर जब से राजगद्दी पर बैठे, अभी तक निर्विघ्न राज्य कर रहे थे। उनका दुर्योधन से कोई सीधा टकराव नहीं था। दुर्योधन गंगा के किनारे हस्तिनापुर में राज्य कर रहे थे और युधिष्ठिर यमुना के किनारे इंद्रप्रस्थ में राज्य कर रहे थे। युधिष्ठिर के मन में सम्राट होने की महत्त्वाकांक्षा जगना उनके भावी भयंकर दुख का कारण बनता है। यद्यपि इसका आभास उनको हुआ था, परंतु वह उनके कच्चे विवेक के कारण भीम, अर्जुन और श्रीकृष्ण की ललकार की आंधी में बह गया।

. श्रीकृष्ण, भीम और अर्जुन की मगध–यात्रा और जरासंध–वध

श्रीकृष्ण ने भीम और अर्जुन को लेकर मगध जाने के लिए तैयारी की। उन तीनों ने क्षत्रिय वेष त्याग कर दिया और स्नातक ब्राह्मणों का वस्त्र पहनकर यात्रा की। वे कुरुदेश से चलकर कुरु जांगल होकर पद्म–सरोवर पहुंचे। फिर उन्होंने कालकूट पर्वत को पार कर गंडकी, महाशोण, सदानीरा एवं एकपर्वतक प्रदेश की अनेक नदियां पार कीं। इसके बाद सरयू नदी पार कर कोसल प्रदेश पहुंचे। कोसल से आगे अनेक नदियों को पार कर मिथिला पहुंचे। पुन: गंगा और शोणभद्र को पार कर पूर्व दिशा में चलकर मगध पहुंच गये। उन्होंने मगध की संपन्न राजधानी देखी।

श्रीकृष्ण ने मगध राजधानी तथा पास के पर्वतों, वनों, उद्यानों, भवनों, आश्रमों आदि की प्रशंसा की। फिर वे गिरिव्रज के निकट पहुंचे। वे तीनों मुख्य द्वार पर न जाकर चैत्यक पर्वत पर चढ़ गये। इस पर्वत की लोग पूजा करते थे। वहां तीन नगाड़े रखे हुए थे। उन पर चोट करने से उसकी आवाज महीने भर तक होती रहती थी। श्रीकृष्ण, भीम और अर्जुन ने अपने हाथों से पर्वत की चोटी गिरा दी और जरासंध के राजभवन में भिन्न रास्ते से घुस गये। उस गली में माली फूल–मालाओं की दुकान लगाकर बैठे थे। इन तीनों ने उन दुकानों से जबर्दस्ती फूल–मालाएं ले लीं। अंतत: ये तीनों जरासंध के महल के पास पहुंच गये। जब ये तीनों जरासंध के पास पहुंचे, तो उसने खड़ा होकर इन तीनों का सत्कार किया।

उस समय भीम और अर्जुन मौन थे। श्रीकृष्ण ने जरासंध से कहा–राजन! इन दोनों का यह नियम है कि ये आधी रात तक नहीं बोलते हैं। ये आधी रात के बाद आपसे बात करेंगे। जरासंध आधी रात को उनके पास गया। वे तीनों खड़े हो गये। जरासंध ने इनको बैठने के लिए कहा। इसके बाद जरासंध ने इन तीनों पर गहरी दृष्टि डाली, तो उसे लगा कि ये ब्राह्मण का नकली वेष बनाये हैं। उसने कहा–आप लोग बिना द्वार के घुस आये हैं, इसका क्या हेतु है? जो कुछ मैंने स्वागत में समर्पित किया उसको आप ग्रहण नहीं कर रहे हैं। आपका हमारे यहां आने का क्या प्रयोजन है?

श्रीकृष्ण ने कहा–आप मुझे स्नातक ब्राह्मण समझ सकते हैं। वैसे स्नातक ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य तीनों होते हैं। वीर लोग मित्र के घर में द्वार से जाते हैं और शत्रु के घर में बिना द्वार के जाते हैं। हम अपने कार्य से यहां आये हैं। इसलिए शत्रु से पूजा नहीं ग्रहण करते।

जरासंध ने कहा—मुझे तो याद नहीं है कि मैंने आप लोगों की कोई हानि की है। आप मुझे निरपराध क्यों शत्रु मान रहे हैं? श्रीकृष्ण ने कहा—तुमने निरपराध राजाओं को कैद कर रखा है, यह अपराध नहीं तो क्या है? इन राजाओं की रुद्रपूजा में बलि देने की बात घिनौनी है। देवपूजा में मनुष्य की बलि कभी नहीं देखा-सुना। तुम अपने ही जाति-भाइयों के हत्यारे हो – *"ते त्वां ज्ञातिक्षयकरम्"* (सभा० ,)। तुमको बड़ा अभिमान है। अभिमान विनाश का लक्षण है। बड़े-बड़े बलवान राजा अपने बड़ों का अपमान करने से विनष्ट हो गये। हम तुमसे युद्ध करने की इच्छा रखते हैं। हम अवश्य ब्राह्मण नहीं हैं। मैं वसुदेव का पुत्र कृष्ण हूं। मैं इन दोनों (भीम-अर्जुन) के मामा (वसुदेव) का पुत्र कृष्ण हूं। मुझे ठीक से पहचान लो।

जरासंध ने कहा—मैं युद्ध में जीते बिना किसी राजा को कैद नहीं किया हूं। मैं आपके भय से इन्हें कैसे छोड़ सकता हूं? अंततः जरासंध भीम से द्वंद्वयुद्ध करने के लिए तैयार हुए। दोनों लंगोटा कसकर आमने-सामने हुए और एक दूसरे के चरणों का अभिवंदन किये और फिर दोनों द्वंद्वयुद्ध में लिपट गये। कार्तिक मास के पहले दिन दोनों का युद्ध आरंभ हुआ और बीच में बिना खाये-पिये त्रयोदशी (तेरह दिन) तक चलता रहा। अंततः चतुर्दशी रात में जरासंध, थककर युद्ध से अलग होना चाहा। श्रीकृष्ण ने भीम से संकेत में कहा—थके हुए शत्रु को अधिक पीड़ा देना उचित नहीं है, क्योंकि वह मर न जाय। भीम और जरासंध का युद्ध चल ही रहा था कि श्रीकृष्ण ने एक नरकुल को दातून की तरह चीर कर संकेत किया और भीम ने जरासंध को पटककर उसको दो टुकड़े में चीर डाला।

इसके बाद श्रीकृष्ण ने बंदी राजाओं को कैद से छुड़ाया और उनसे कहा कि युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ करना चाहते हैं, आप लोग उनकी सहायता करें। राजाओं ने श्रीकृष्ण की आज्ञा स्वीकारी। जरासंध के पुत्र सहदेव का मगध पर राज्याभिषेक हुआ। श्रीकृष्ण के वहां से चलते समय सहदेव ने कहा—मेरे पिता ने जो आपके साथ दुर्व्यवहार किया है, उसे आप दिल से निकाल दें।

श्रीकृष्ण भीम और अर्जुन को लेकर इंद्रप्रस्थ लौट आये। यह सब संदेश पाकर युधिष्ठिर का प्रसन्न होना स्वाभाविक था (अध्याय -)।

मीमांसा

लेखक श्रीकृष्ण, भीम और अर्जुन को इंद्रप्रस्थ से चलने पर पश्चिम दिशा में चलाता है, कुरुजांगल कुरु देश से पश्चिम था। यह पाठदोष लगता है। लेखक

इन लोगों को कोशल देश से मिथिला ले जाता है जो गलत है। मिथिला तो भारत की उत्तरी सीमा पर है। यह भी पाठदोष है। वस्तुतः कोशल से काशी होते हुए सीधा पूर्व मगध है। नगाड़े पर चोट करने से महीने भर तक उसकी आवाज होती रहती थी, अतिशयोक्ति है। श्रीकृष्ण आदि का हाथों से पर्वत-शिखर तोड़ना भी अतिशयोक्ति है।

श्रीकृष्ण आदि तीनों का जरासंध से मिलना, वार्तालाप, द्वंद्वयुद्ध आदि सब बड़ा भावुकतापूर्ण है। एक बलवान सम्राट इस प्रकार बेवकूफ बने, वह तुरंत इन तीनों को कैद न करवा ले, अस्वाभाविक लगता है। चौदह दिनों तक बिना खाये-पिये और बिना रुके द्वंद्वयुद्ध का चलते रहना, सहज ही समझा जा सकता है कि अस्वाभाविक है।

बीच में श्रीकृष्ण के मुख से जरासंध के लिए जो यह बात आयी है– *'ते त्वां ज्ञातिक्षयकरम्'*–तुम अपने ही जाति-भाइयों के हत्यारे हो। इससे यह ध्वनित होता है कि जरासंध के राजवंश के लोग उससे असंतुष्ट थे। अतएव उनके सहयोग से श्रीकृष्ण आदि तीनों ने जरासंध के निवास में घुसकर किसी प्रकार जरासंध का काम तमाम किया हो।

. दिग्विजय की तैयारी और दिग्विजय

राजसूय यज्ञ का जो मुख्य कंटक था वह जरासंध मार दिया गया। अब रास्ता साफ हो गया। परंतु उसके लिए धन का बड़ा भंडार चाहिए। वह राजाओं से कर लेकर ही संभव था। उस समय सम्राट बनने का यह नियम था कि सम्राट बनने की इच्छा वाला राजा अन्य राजाओं पर विजय प्राप्त करे। जो राजा बिना युद्ध किये स्वयं कर दे दे, वह अधीन मान लिया जाता था। शेष से युद्ध करके उसे अपने अधीन किया जाता था और उससे कर के रूप में धन लिया जाता था।

पहले यज्ञ अंधविश्वास के आधार पर चलता था जिससें माना जाता था कि हवन-द्रव्य अग्नि में पड़ने पर उसकी सुगंध देवता को मिलती है और वे प्रसन्न होते हैं और हमें वर्षा, धन, रत्न आदि सब कुछ देते हैं। पीछे ब्राह्मण-पुरोहितों का यह पेटधंधा बना। इसके बाद उन्होंने राजाओं से अधिक धन ऐंठने के लिए यज्ञ का बड़ा-बड़ा प्रपंच रचा–अश्वमेध, राजसूय आदि यज्ञ। निरपराध राजाओं, सेना तथा जनता को मारकर, उनको अपने अधीन बनाकर तथा उनका धन लूटकर लाना और अपनी झूठी शान-शौकत करना और पुरोहितों को मोटी रकम देकर पाप से उद्धार का भ्रम पालना होता रहा। ये पुरोहितों और

राजाओं के भयंकर क्रूर कर्म थे। इसीलिए यह सब हजारों वर्षों से बंद हो गया है।

युधिष्ठिर को सम्राट बनने का धोखा पालना है; अतएव उन्होंने अपने चारों भाइयों को चारों दिशाओं में दिग्विजय के लिए भेजने की तैयारी की। वेदव्यास ने आज्ञा दी कि अर्जुन उत्तर दिशा में जाकर देवों पर विजय करें। अर्जुन ही हैं जो देवताओं पर विजय करके उनके धन को बलपूर्वक ला सकते हैं। भीम पूर्व, सहदेव दक्षिण तथा नकुल पश्चिम दिशा में जाकर दिग्विजय करें और वहां से धन लावें।

आगे (सभा० , –) लिखा है कि अर्जुन ने कुबेर की प्रिय उत्तर दिशा पर विजय पायी। भीमसेन ने पूर्व दिशा पर विजय पायी, सहदेव ने दक्षिण दिशा पर विजय पायी और नकुल ने पश्चिम दिशा पर विजय पायी। केवल युधिष्ठिर अपने मित्रों से घिरे इन्द्रप्रस्थ में रह गये थे।

पहले संस्करण की दिग्विजय का यही वर्णन है। परंतु आगे आने वाले पंडित लेखकों को इतने संक्षिप्त वर्णन में संतोष होने वाला नहीं था; अतएव उन्होंने आगे जनमेजय से कहलवाया–ब्रह्मन! दिग्विजय का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए। अपने पूर्वजों का चरित्र सुनते मेरा जी भर नहीं रहा है। इसके बाद वैशंपायन से विस्तारपूर्वक दिग्विजय की कथा कहलायी जाती है, जो सात अध्यायों और दो सौ दस श्लोकों में हैं; प्रत्युत इससे अधिक प्रक्षेप में भी प्रक्षेप श्लोक हैं (अध्याय)।

मीमांसा

वेदव्यास ने कहा कि अर्जुन उत्तर दिशा में जाकर देवों पर विजय करें। पुराण लेखकों को यह बारंबार याद होता है कि उत्तर हिमालय की तरफ देवता रहते हैं। लगता है कि पहले के लोग हिमालयवासी या तिब्बत आदि के लोगों को लोग देवता कहते थे।

. अर्जुन की बृहत्तर उत्तर दिशा पर विजय

अर्जुन ने इंद्रप्रस्थ से चलकर पुलिंद देश के राजाओं को जीता। इसके बाद कुलिंद, कालकूट, आनर्त देशों के राजाओं को जीतकर सुमंड को भी जीत लिया और उन्हें अपना साथी बनाकर शाकल द्वीप तथा राजा प्रतिविन्ध्य पर विजय की। शाकल द्वीप तथा अन्य सात द्वीपों के राजाओं से अर्जुन का घमासान युद्ध

हुआ। इन पर विजय करने के बाद सुदूर प्राग्ज्योतिषपुर पर धावा किया जो आजकल असम का क्षेत्र है। यहां का राजा भगदत्त था जो बड़ा बलवान था। ये किरात, चीन तथा अनेक समुद्र तटीय योद्धाओं से घिरे थे। भगदत्त तथा अर्जुन का आठ दिनों तक युद्ध हुआ। अंततः भगदत्त ने अपनी हार मान ली और भारी भेंट देकर मित्रता कर ली।

प्राग्ज्योतिषपुर से उत्तर मुड़कर अर्जुन कुबेर द्वारा सुरक्षित अंतर्गिरि, बहिर्गिरि तथा उपर्गिरि नामक प्रदेशों पर विजय की। अंतर्गिरि हिमालय की ऊंची चोटियां हैं, जो बर्फ से ढकी रहती हैं। उससे कम ऊंची चोटियां बहिर्गिरि हैं जैसे नैनीताल आदि का क्षेत्र, और उपर्गिरि देहरादून से लेकर पूर्व दिशा का तराई क्षेत्र है। इन सभी प्रदेशों के राजाओं पर विजय करके इनसे धन वसूला गया। इसके बाद अर्जुन ने उलूकवासी राजा बृहंत पर आक्रमण किया। यहां बड़ा घमासान युद्ध हुआ, परंतु अंततः राजा बृहंत अर्जुन के अधीन हो गये और रत्नों की भेंट देकर उनके साथ हो गये। आगे सेनाबिंदु पर आक्रमण किया और उन पर विजय कर ली। इसके बाद अर्जुन ने मोदापुर, वामदेव, सुदामा, सुसंकुल तथा उत्तर उलूक देशों पर धावा बोला और उनको अपने अधीन किया और उनसे कर लिया। वहीं रहकर अर्जुन ने पंचगण नामक देशों को जीता। इसके बाद सेनाबिंदु की राजधानी देवप्रस्थ में सेना सहित पड़ाव डाला। यहीं से पौरव राजा विश्वगश्व पर आक्रमण किया और उनको जीत लिया। पर्वत निवासी लुटेरों के सात दलों पर अर्जुन ने विजय पायी। ये 'उत्सव संकेत' कहलाते थे। इनमें उत्सव के समय सामूहिक विवाह होता था।

आगे अर्जुन ने काश्मीर पर धावा बोला। यहां दसमंडलों के साथ राजा लोहित को जीत लिया। इसके बाद त्रिगर्त, दार्व और कोकनद आदि राजे अर्जुन के अधीन हुए। इसके बाद अभिसारी नरेश तथा उरगावासी राजा रोचमान को जीता। इसके बाद सिंहपुर के राजा चित्रायुध को परास्त किया। इसके बाद सुह्म और चोल देश की सेनाओं को मथ डाला। अर्जुन का आगे वाह्लीकों से घोर युद्ध हुआ। बल्ख नदी के क्षेत्र में रहने वाले वाह्लीक जन बड़े लड़ाकू थे। यही देश आज–कल बलख कहलाता है। अर्जुन ने इनको जीतकर कंबोजों और दरदों को जीता। वहां वन में रहने वाले लुटेरे और डाकुओं को अपने वश में किया। फिर लोह, परम कांबोज, ऋषिक तथा उत्तर देशों को जीता। ऋषिकों से अर्जुन को घमासान युद्ध करना पड़ा। फिर हिमवान और निस्कुट प्रदेशों को जीतकर धवलगिरि पर आकर अर्जुन ने डेरा डाला। अर्जुन जिस राजा को जीतते थे उसे कर देते रहने की शर्त पर उस राज्य पर प्रतिष्ठित कर देते थे।

किन्नरदेश, हाटकदेश के राजाओं को अपने अधीन करके अर्जुन मानसरोवर गये। वहां के गंधर्वों पर विजय की। इसके बाद अर्जुन कुरुवर्ष गये। वहां के महाबली द्वारपालों ने कहा कि आप यहां तक आ गये यही बहुत है। यहां युद्ध संभव नहीं है। अंततः उन्होंने रत्न-धन देकर अर्जुन को विदा कर दिया।

इसके बाद अर्जुन विजय में प्राप्त अतुल धन, रत्न, विविध वस्तुएं तथा घोड़े लेकर इंद्रप्रस्थ पहुंच गये और वह सब युधिष्ठिर को अर्पित कर दिये (अध्याय -)।

. भीम की पूर्व दिशा के देशों पर विजय

भीम अपने दल-बल के साथ पूर्व दिशा में चले। पहले उन्होंने पांचाल वीरों को समझा-बुझा कर अपने अधीन कर लिया। फिर गंडकी नदी पार कर मिथिला, दशार्ण आदि देश को जीता। दशार्ण नरेश सुधर्मा ने भीम से मल्लयुद्ध किया जो रोंगटे खड़े कर देने वाला था। भीम ने उनसे प्रभावित होकर उनको अपना प्रधान सेनापति बनाया। भीम अपनी विशाल सेना को लेकर पृथ्वी को कंपाते हुए पूर्व दिशा को बढ़े। उन्होंने अश्वमेध देश के राजा को बलपूर्वक जीता। इसके बाद भीम ने अपने कोमल बरताव से पूर्व के अनेक देशों को जीता। फिर दक्षिण पहुंचकर पुलिंदों के राजा सुमित्र को जीता।

युधिष्ठिर की आज्ञा थी कि शिशुपाल के यहां भी जाना। भीम वहां गये जो आज का जबलपुर क्षेत्र है। चेदिनरेश शिशुपाल भीम से मिले और उनका आदर-सत्कार किये और अपना राष्ट्र भीम को समर्पित कर हंसते हुए पूछा–यह सब क्या कर रहे हो? भीम ने युधिष्ठिर की मनसा बतायी, तो शिशुपाल ने कर देना स्वीकार कर उन्हें विदा किया।

भीम ने कुमारदेश के राजा श्रेणिमान और कौसलराज बृहद्बल को परास्त किया। भीम ने अयोध्या के नरेश दीर्घयज्ञ को कोमल बरताव से वश में कर लिया। इसके बाद गोपाल कक्ष तथा उत्तर कोसल देश को जीतकर मल्ल राष्ट्र के अधिपति पार्थिव को अपने अधीन बनाया। इसके बाद भीम ने हिमालय की तराई में जाकर थोड़े समय में सब नरेशों को अपने वश में कर लिया। इसके बाद भीम ने काशिराज सुबाहु को जीता। फिर क्रथ को जीतकर मत्स्य, मलद, अनघ और अभय नामक देशों को जीता। इसके बाद पशुभूमि नेपाल को जीता। वहां से लौटकर भीम ने सोमधेय निवासियों को जीता। इसके बाद उन्होंने वत्सभूमि पर बलपूर्वक विजय की। फिर भर्गों के स्वामी, निषादों के अधिपति

तथा मणिमान नाम के नरेशों को जीता। इसके बाद दक्षिण के मल्ल देश तथा भोगवान पर्वत पर सहज ही भीम ने विजय कर ली।

भीम ने शर्मकों और वर्मकों को समझाकर जीत लिया। विदेह–नरेश जनक को बिना अधिक मेहनत के ही परास्त कर दिया। इसके बाद भीम ने शकों और बरबरों पर छल से विजय की। विदेह देश में रुककर भीम ने इंद्रपर्वत के निकटवर्ती सात किरात राजाओं को जीत लिया। इसके बाद भीम सुह्य और प्रसुह्य देश के राजाओं को परास्त कर मगध देश को चले आये। रास्ते में दंड, दंडधर तथा अन्य राजाओं को भी जीता। भीम ने जरासंध के पुत्र सहदेव को उनसे कर लेकर छोड़ दिया। इसके बाद वे अंग (भागलपुर) देश के राजा कर्ण पर चढ़ाई की। कर्ण को परास्त कर उन्होंने अन्य पर्वतीय राजाओं पर विजय की। इसके बाद मोदागिरि के बलवान राजा को मार गिराया। इसके बाद कोसी नदी के कछार में रहने वाले पुंड्रक देश के राजा वासुदेव के साथ जा भिड़े। भीम ने उनको हराकर बंग देश (बंगाल) पर हमला किया। इसके बाद भीम ने समुद्रसेन, चंद्रसेन, ताम्रलिप्त, कर्वट–नरेश तथा सुह्य–नरेश को जीतकर समुद्र तटवर्ती म्लेच्छों को अपने वश में किया। इसके बाद भीम अनेक देशों पर विजय करके और उनसे धन लेकर लौहित्य देश को गये। वहां समुद्र के अनेक टापुओं में रहने वाले अनेक म्लेच्छ राजाओं को जीतकर उनसे रत्न एवं धन वसूल किये। उन राजाओं ने भीम को चंदन, अगर, वस्त्र, मणि, मोती, कंबल, सोना, चांदी और कीमती मूंगे भेंट किये। भीम को वहां करोड़ों की संपत्ति मिली। अंततः भीम यह सब धन लाद–फांद कर इंद्रप्रस्थ पहुंच गये और युधिष्ठिर को सब अर्पित कर दिये (अध्याय –)।

. सहदेव की दक्षिण दिशा पर विजय

सहदेव युधिष्ठिर से आज्ञा लेकर विशाल सेना के साथ चलकर पहले सूरसेन निवासियों को तथा मत्स्यराज विराट को जीतकर उनसे कर वसूला। फिर दंतवक्र, सुमित्र, मत्स्यों तथा लुटेरों पर कब्जा किया। फिर निषाद देश तथा गोशृंग को जीतकर श्रेणिमान को परास्त किया। फिर नरराष्ट्र और कुंतिभोज को जीता। इसके बाद चर्मण्वती (चंबल) के तटवासी जंभक के पुत्र को जीता और दक्षिण दिशा को बढ़ गये। इसके बाद सहदेव ने सेक तथा अपरसेक देशों पर विजय की। इसके बाद सहदेव ने अवंती के राजकुमार बिंद–अनुबिंद को जीता। इसके बाद भोजकट पर विजय करके भीष्मक को जीता। फिर वेणा नदी के

तटवर्ती प्रदेशों के नरेशों, फिर नाटकेयों तथा हेरंबकों को जीता। इसके बाद रम्य-ग्राम, नाचीन, अर्बुक पर विजय करके सभी वनेचर राजाओं को जीता। इसके बाद सहदेव ने वाताधिप को जीता। इसके बाद पुलिंदों को हराकर पांड्य नरेश को जीता।

सहदेव लोकविख्यात किष्किंधा की गुफा में जा पहुंचे। वहां वानरराज मैंद और द्विविद से सात दिनों तक युद्ध हुआ। सहदेव उन दोनों का कुछ बिगाड़ नहीं कर पाये; परंतु उन्होंने रत्नों की भेंट देकर सहदेव का सत्कार कर दिया। फिर सहदेव माहिष्मती पुरी जाकर राजा नील से भिड़ गये और उनसे कर लेकर दक्षिण चले गये। उन्होंने त्रिपुरी के राजा अमितौजा तथा पौरवेश्वर और सुराष्ट्र देश के राजा कौशिकाचार्य को परास्त किया। भोजकट निवासी रुक्मी तथा बड़े राजा भीष्मक को सहज ही वश में कर लिया। फिर सहदेव ने शूर्पारक तालाकट तथा दंडकारण्य के नरेशों को जीता। इसके बाद समुद्र क्षेत्र निवासी म्लेच्छ जातीय राजाओं, निषादों, राक्षसों और कर्ण-प्रावर्णकों को परास्त किया।

सहदेव ने कोलगिरि, सुरभी पत्तन, ताम्रद्वीप, रामक पर्वत, तिमिंगिल, पैर, केरलों, वनवासियों, संजयंती, पाखंड, करहाटक देशों पर विजय की। आगे पांड्य, द्रविड; उंड्र, आंध्र, तालवन, कलिंग, उष्ट्रकर्णिक, आटवीपुरी और यवनों के नगरों पर सहदेव ने विजय की। इस प्रकार दक्षिण देशों पर विजय कर तथा उनसे कर वसूल कर सहस्र कोटि से भी अधिक धन लाकर राजा युधिष्ठिर को सहदेव ने अर्पित किया (अध्याय)।

. नकुल की पश्चिम दिशा पर विजय

नकुल विशाल सेना लेकर युधिष्ठिर की आज्ञा से पश्चिम दिशा पर विजय करने चले। वे पहले मत्तमयूर नाम वाले राजाओं को वश में किये। इसके बाद पूर्ण मरुभूमि (मारवाड़) को अपने अधीन किया। पश्चात शैरीषक, महोत्थ, शिवि, त्रिगर्त, अंबष्ठ, मालव, पंचकर्पट, वाटधान, पुष्कारण्य, पंचनंद (पंजाब), अमरपर्वत, उत्तर ज्योतिष, दिव्यकट आदि देशों को नकुल ने जीतकर वहां से कर वसूला। रामठ, हार, हूण आदि पश्चिमी नरेशों पर उन्होंने विजय की। मद्रदेश के राजा शाल्व को जो नकुल के मामा थे, प्रेम से वश में कर लिया। फिर नकुल ने समुद्री तट के लड़ाकू म्लेच्छ, पहलव, बर्बर, किरात, यवन, शक आदि को जीतकर और उनसे धन-रत्न लेकर इंद्रप्रस्थ लौट आये और राजा युधिष्ठिर के चरणों में समर्पित कर दिये (अध्याय)।

मीमांसा

अर्जुन, भीम, सहदेव तथा नकुल उत्तर, पूर्व, दक्षिण तथा पश्चिम देश में जाकर विजय की और उनसे कर वसूला। वस्तुतः सभा पर्व के पचीसवें अध्याय के नवें और दसवें श्लोक में ही संक्षेप में कह दिया गया है कि अर्जुन ने उत्तर, भीम ने पूर्व, सहदेव ने दक्षिण और नकुल ने पश्चिम दिग्विजय की। आगे के लेखक पंडितों को विस्तार से दिग्विजय कराने का विचार हुआ। लेखक को बृहत्तर भारत के देशों का काफी कुछ ज्ञान था। उलटा–सीधा वर्णन तो है ही। किष्किंधा के द्विविद, मैंद तथा मिथिला के जनक पर भी लेखक ने विजय करा दी जो भिन्न काल के लोग थे और बहुत पहले के थे।

इन सभी विजयों में ठकुरई और हैकड़ी ही नहीं, क्रूर कर्म हैं, परंतु उनके लेखे यह सब धर्म–काम था। जब आज के वैज्ञानिक युग में निरीह पशुओं को मारकर ईश्वर और देवता को प्रसन्न करने का भ्रम पाला जाता है, तब क्या धर्म की छीछालेदर करने में कुछ बच रहता है?

. यज्ञ का आरंभ

दिग्विजय हो जाने तथा चारों तरफ से बहुत धन आ जाने से युधिष्ठिर का मन राजसूय यज्ञ करने के लिए जोर पकड़ लिया। *'गोरक्षा कर्षणं वणिक्'* गोरक्षा, खेती और व्यापार राज्य में चमक गये थे। श्रीकृष्ण आ गये। उनकी तरफ से युधिष्ठिर को यज्ञ करने की अनुमति मिल गयी। युधिष्ठिर ने सहदेव तथा मंत्रियों को आज्ञा दी कि वे यज्ञ–सामग्री एकत्र करें।

यज्ञ में व्यास स्वयं ब्रह्मा बने, याज्ञवल्क्य अध्वर्यु, पैल और धौम्य होता बने। सभी वर्ग के देवता निमंत्रित किये गये। सबके खाने–पीने, रहने–बसने की व्यवस्था की गयी। एक तरफ यज्ञ होता था और दूसरी तरफ कथा–वार्ता होती थी। नट–नर्तक भी अलग मनोरंजन के लिए अपना करतब दिखा रहे थे।

इसमें धृतराष्ट्र, भीष्म, विदुर, दुर्योधन, शकुनि, कर्ण, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, जयद्रथ, द्रुपद, शिशुपाल, भगदत्त आदि सभी नरेश इकट्ठे हुए। युधिष्ठिर ने सबका सत्कार किया और कहा कि आप लोग मेरे ऊपर कृपा करें।

भोजन परोसने की देख–रेख दुःशासन को, ब्राह्मणों के स्वागत–सत्कार करने का दायित्व अश्वत्थामा को; राजाओं के सत्कार की जिम्मेदारी संजय को, कौन काम हुआ और कौन नहीं हुआ इसकी देख–रेख की जिम्मेदारी भीष्म और

द्रोणाचार्य को दी गयी। रत्नों को परखने, रखने तथा दक्षिणा देने का काम कृपाचार्य को दिया गया। विदुर को धन खर्च करने का काम सौंपा गया। दुर्योधन को काम सौंपा गया कि राजाओं से जितना भेंट एवं चढ़ावा आये, उसे वे स्वीकारें और रखें। श्रीकृष्ण ने ब्राह्मणों के चरण पखारने का काम लिया। 'दान लीजिए, भोजन कीजिए' की ध्वनि वहां सर्वत्र सुनायी देती थी (अध्याय)।

. श्रीकृष्ण की अग्रपूजा, शिशुपाल का आक्षेप और उसका वध

भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा—आचार्य, ऋत्विज, संबंधी, स्नातक, प्रिय मित्र और राजा इनको अर्घ्य देकर यथायोग्य पूजना चाहिए। इनमें जो सबसे श्रेष्ठ हों उनकी अग्रपूजा होनी चाहिए। युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म ने श्रीकृष्ण को सर्वश्रेष्ठ कहा और उन्हीं की अग्रपूजा करने की राय दी। अतएव युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण के चरण धोये और उनकी पूजा की।

चेदिनरेश शिशुपाल जो श्रीकृष्ण का फूफेजात भाई था, श्रीकृष्ण की पूजा होते देखकर क्रुद्ध हो गया, और भीष्म, युधिष्ठिर और कृष्ण को भी उलटा-पलटा कहने लगा। शिशुपाल ने कहा—इन राजाओं के बीच वृष्णिवंशी कृष्ण राजोचित पूजा का अधिकारी कदापि नहीं हो सकता। पांडव ऐसा विपरीत आचरण करें, यह ठीक नहीं है। पांडव! स्वार्थ-वश तुमने कृष्ण की पूजा की है। तुम लोग बालक हो। तुम्हें धर्म का ज्ञान नहीं है। भीष्म बूढ़े हो चले हैं। इनकी स्मरणशक्ति ने जवाब दे दिया है। इनकी सूझ और समझ भी कम हो गयी है। भीष्म ने कृष्ण की मुंहदेखी बात की है। यह सभी जानते हैं कि कृष्ण राजा नहीं है। फिर सभी भूपालों के बीच में इसकी पूजा क्यों की? वैसी पूजा का अधिकारी यह कैसे हो सकता है? यदि कृष्ण को बड़ा-बूढ़ा समझते हो, तो इनसे बूढ़े इनके पिता वसुदेव यहीं बैठे हैं, फिर उनके रहते हुए ये पूजा के पात्र कैसे हो सकते हैं ? यदि कृष्ण को अपना मित्र मानकर तुमने इनकी पूजा की, तो तुम्हारे श्रेष्ठ मित्र तो द्रुपद हैं, और वे यहीं बैठे हैं। यदि कृष्ण को तुम आचार्य मानते हो, तो द्रोणाचार्य के रहते हुए यदुवंशी की पूजा तुमने क्यों की?

यदि कहो कि मैं कृष्ण को ऋत्विज (यज्ञ का पुरोहित) मानता हूं, तो बड़े ऋत्विज वेदव्यास सामने बैठे हैं, फिर उनके रहते हुए कृष्ण की पूजा क्यों?

भीष्म पुरुष-शिरोमणि हैं, शास्त्रों के निपुण विद्वान अश्वत्थामा हैं। इनके रहते हुए कृष्ण की पूजा क्यों कर डाली? राजाधिराज दुर्योधन तथा आचार्य कृप के रहते हुए कृष्ण पूजा पाने के अधिकारी कहां हैं? आचार्य द्रुम, भीष्मक, रुक्मी, धनुर्धर एकलव्य, मद्रराज शल्य के रहते हुए कृष्ण की पूजा का औचित्य कहां है? महाबली कर्ण के सामने कृष्ण की पूजा करना गलत है। कृष्ण न ऋत्विज हैं, न आचार्य हैं और न राजा हैं, फिर उनकी पूजा किस कामना से की? यदि कृष्ण ही तुम्हारे पूज्य हैं, तो इन राजाओं को बुलाकर इनका अपमान करने की क्या आवश्यकता थी?

हम लोग जो युधिष्ठिर को कर दे रहे हैं वह भय, लोभ या कोई आश्वासन मिलने के कारण नहीं। हम तो समझे थे कि युधिष्ठिर यदि सम्राट बनना चाहते हैं, तो अच्छा ही है, बन जायें, परंतु यह तो हम राजाओं का अपमान करने पर तुला है। इससे बढ़कर राजाओं का अपमान क्या होगा कि राजाओं की सभा में जिसे राजोचित छत्र-चंवर आदि प्राप्त नहीं हुआ है, उस कृष्ण की तुमने अर्घ्य देकर पूजा की? युधिष्ठिर को अकस्मात ही धर्मात्मा होने का यश प्राप्त हो गया है, अन्यथा कौन ऐसा धार्मिक होगा जो धर्मच्युत की इस प्रकार की पूजा करेगा? दुरात्मा कृष्ण ने कुछ ही दिन पहले राजा जरासंध का अन्यायपूर्वक वध किया है। युधिष्ठिर का धर्मात्मापन तो तभी दूर निकल गया जब इन्होंने कृष्ण की पूजा की।

शिशुपाल ने अब कृष्ण की ओर मुड़कर तथा उन्हें देखकर कहा–पांडव डरपोक, कायर और तपस्वी हैं, इन्हीं में से यदि किसी ने तुम्हारी पूजा कर दी, तो तुम्हें तो समझना चाहिए कि तुम किस पूजा के अधिकारी हो? इन कायरों की उपस्थित की हुई पूजा योग्य न होते हुए तुमने क्यों स्वीकार की? जैसे कुत्ता एकांत में चू कर गिरे हुए थोड़े से हविष्य को चाट ले और इससे वह अपने को धन्य मानने लगे, वैसे तुम अपनी अयोग्य पूजा को पाकर अपने को धन्य मान रहे हो। कृष्ण! इस तुम्हारी अग्रपूजा से हम राजाओं का कोई अपमान नहीं होता है, अपितु ये पांडव तुम्हारी अनधिकृत पूजा करके तुम्हें धोखा दे रहे हैं। कृष्ण! जैसे अंधे को रूप दिखाना, हिजड़े का ब्याह रचाना उनका ही मजाक करना है, इसी प्रकार तुम राज्यहीन की राजाओं के सामने अग्रपूजा होना तुम्हारी ही विडंबना है। आज मैंने युधिष्ठिर को देख लिया, भीष्म जैसे हैं उन्हें भी समझ लिया और कृष्ण की सच्चाई क्या है, इसे भी देख लिया। वास्तव में ये सब ऐसे ही हैं। ऐसा कहकर शिशुपाल आसन से उठकर कुछ राजाओं के साथ जाने के लिए तत्पर हो गया।

युधिष्ठिर शिशुपाल के पास दौड़े गये और उन्हें शांतिपूर्वक समझाने लगे–राजन! तुम्हें ऐसी कठोर बातें नहीं करनी चाहिए जैसी कह डाली हैं। किसी के प्रति ऐसा नहीं कहना चाहिए। देखो, यह अनेक राजे-महाराजे जो तुमसे बड़ी अवस्था के हैं, उन्होंने कृष्ण की अग्रपूजा सह ली है। इसी प्रकार तुम्हें भी इस विषय में कुछ नहीं कहना चाहिए। पितामह भीष्म श्रीकृष्ण को ठीक से जानते हैं तभी उन्होंने उनकी अग्रपूजा की आज्ञा दी है।

भीष्म ने कहा–श्रीकृष्ण अग्रपूजा के योग्य हैं। जो उनको नहीं समझता उसका अनुनय-विनय करना व्यर्थ है। ब्राह्मण विद्वान होने से पूज्य होता है और क्षत्रिय शूरवीर होने से, श्रीकृष्ण दोनों हैं।

अड़तीस (   )वें अध्याय में कुल तैंतीस श्लोक हैं, परंतु इसमें किसी लेखक पंडित ने लगभग सवा सात सौ श्लोक बनाकर प्रक्षेप किया है जिसमें कृष्ण की अपार महिमा की गयी है। गीताप्रेस वालों ने इन श्लोकों में नंबर नहीं दिया है। इस प्रकार पहले का तैंतीस श्लोक है और पीछे का प्रक्षेप सवा सात सौ श्लोक।

सहदेव ने श्रीकृष्ण की पूजा न सहने वाले राजाओं को ललकारा कि जिनको कृष्ण-पूजा सहन न हो वह आकर युद्ध कर ले। शिशुपाल ने भड़क कर कहा–भूपालो! मैं आप सबका सेनापति बनकर खड़ा हूं। आओ, हम लोग युद्ध के लिए तैयार हो जायं, और पांडवों तथा यादवों को ठिकाने लगा दें। इसके बाद शिशुपाल के पक्षधर राजे-महाराजे एक गुट हो गये और युधिष्ठिर के यज्ञ को नष्ट करने की बात सोचने लगे। सभा में भारी गड़बड़ी मच गयी। श्रीकृष्ण ने समझ लिया कि ये राजे-महाराजे युद्ध के लिए तैयार हैं।

युधिष्ठिर घबरा गये। राजाओं के समुद्र में जोर की तरंगें उठ रही थीं। कैसे शांति हो, समझ में नहीं आ रहा था। युधिष्ठिर ने भीष्म से कहा–पितामह! अब क्या होगा? जिससे शांति हो वह उपाय बतावें। भीष्म ने कहा–घबराओ मत। राजे-महाराजे कुत्ते की तरह तब तक भूंकते हैं जब तक श्रीकृष्ण रूपी सिंह चुप बैठा है।

उक्त बातें सुनकर शिशुपाल भड़क उठा। उसने कहा–भीष्म! यदि तुम धर्म जानते हो तो बताओ काशिराज की धर्मज्ञ कन्या अंबा को जो कि दूसरे पुरुष में अनुरक्त थी, उसका अपने को पंडित मानने वाले तुमने क्यों अपहरण किया? तुम्हारे भाई विचित्रवीर्य ने अंबा को नहीं स्वीकारा, क्योंकि वे सन्मार्गगामी थे। तुम्हारे भाई विचित्रवीर्य की दोनों विधवा पत्नियों से तुम्हारे देखते-देखते दूसरे

पुरुष द्वारा संतानें उत्पन्न की गयी हैं। फिर भी तुम अपने को सन्मार्गगामी मानते हो? तुम्हारा धर्म क्या है? तुम्हारा यह ब्रह्मचर्य भी ढकोसला मात्र है। तुमने मोह-वश ही ब्रह्मचर्य का दिखावा कर रखा है। जरासंध महान थे। वे कृष्ण को दास समझकर इसके साथ लड़ना नहीं चाहते थे; किंतु इसने चुपके से घर में घुसकर तथा छलपूर्ण ब्राह्मण का वेष बनाकर जरासंध को मरवा डाला।

यह सब सुनकर भीम गरम हो गये, तो भीष्म ने उनको शांत किया। अंततः बाताकुही बढ़ते-बढ़ते शिशुपाल ने कृष्ण से लड़ने के लिए राजाओं को चुनौती दे डाली।

श्रीकृष्ण ने राजाओं को संबोधित कर मधुर वाणी में कहा–शिशुपाल यदुकुल की कन्या का पुत्र है, परंतु यह हम लोगों से शत्रुता रखता है। यद्यपि यादवों ने इसका कभी कोई अहित नहीं किया है, तो भी यह उनके अहित में लगा रहता है। हम प्राग्ज्योतिषपुर गये थे, ऐसा जानकर यह मेरा फूफेजात भाई होते हुए द्वारका में इसने आग लगवा दी। एक बार उग्रसेन रैवतक पर्वत पर खेलकूद के उत्सव में थे। उस समय यह वहां जाकर सेवकों को मारा और शेष व्यक्तियों को कैद कर अपने नगर ले गया। मैं अपनी बुआ के संतोष के लिए इसे क्षमा करता रहा। परंतु अब अति हो गया है। इसने रुक्मिणी को पत्नी बनाने के लिए उसके बंधु-बांधवों से मांगा था, परंतु वह इस अयोग्य को कहां मिल सकती थी। कृष्ण का यह वचन सुनकर शिशुपाल जोर से हंस पड़ा और कहा–कृष्ण! यदि तुम इस भरी राजसभा में यह स्वीकारते हो कि रुक्मिणी मेरी पहले की मनोनीत पत्नी है, तो यह बात कहने में तुम्हें सभा में लज्जा नहीं आती? तुम्हारे अलावा दूसरा कौन होगा जो अपनी पत्नी को दूसरे की वाग्दत्ता पत्नी स्वीकार करते हुए सभा में वर्णन करे? कृष्ण! अपनी बुआ एवं मेरी माता पर तुम्हें श्रद्धा है तो मेरे अपराध को क्षमा करो, या न भी करो। तुम्हारे क्रोध या प्रसन्नता से मेरा कुछ बनने-बिगड़ने वाला नहीं है।

इसके बाद श्रीकृष्ण नहीं सह सके और उन्होंने चक्र चलाकर शिशुपाल को भरी सभा में मार गिराया। इससे कुछ राजे क्रोध से दांत पीसने लगे, और कुछ प्रशंसा करने लगे तथा कुछ तटस्थ रहे।

युधिष्ठिर ने अपने भाइयों से कहा कि दमघोष के पुत्र वीर राजा शिशुपाल का अंत्येष्टि संस्कार बड़े सत्कार से करो। भाइयों ने वैसे ही किया। इसके बाद युधिष्ठिर ने शिशुपाल के पुत्र का चेदि देश की राजगद्दी पर अभिषेक कर दिया (अध्याय –)।

मीमांसा

विदर्भ-नरेश भीष्मक की पुत्री थी रुक्मिणी, पुत्र था रुक्मी। चेदि-नरेश शिशुपाल रुक्मिणी को अपनी पत्नी बनाना चाहता था। रुक्मिणी का भाई रुक्मी भी शिशुपाल को ही जीजा बनाना चाहता था; परंतु स्वत: रुक्मिणी श्रीकृष्ण को अपना पति बनाना चाहती थी। जब विदर्भ-नरेश ने रुक्मिणी का स्वयंवर रचा, तब बहुत से राजे-महाराजे वहां आये। शिशुपाल तो अपने आप को रुक्मिणी का दूल्हा ही मानकर आया।

रुक्मिणी ने चुपके से एक ब्राह्मण को दूत बनाकर द्वारका भेज दिया कि मैं श्रीकृष्ण को चाहती हूं तो श्रीकृष्ण दल-बल के साथ विदर्भ में आ धमके। जब रुक्मिणी देव-पूजन के लिए नगर से बाहर गयी थी, वहीं श्रीकृष्ण उसे अपने रथ में बैठाकर ले भागे। लोगों ने पीछा किया, किंतु सबको श्रीकृष्ण तथा उनकी सेना ने हरा दिया, रुक्मी अधिक पीछे पड़ा, तो श्रीकृष्ण ने उसे अधिक अपमानित किया, किंतु रुक्मिणी के मना करने पर उसे छोड़ दिया।

शिशुपाल को यह कामना-भंग और अपमान का दुख सदैव खटकता रहा। राजसूय-यज्ञ की सभा में श्रीकृष्ण की अग्रपूजा देखकर उसके मन का बांध टूट पड़ा, और सभा में न कहने योग्य बातें भी कह डालीं। सारा झगड़ा इंद्रिय-भोग और प्रतिष्ठा की कामना लेकर है। भोग तथा प्रतिष्ठा की कामना छोड़े बिना कोई कलह-रहित एवं शांत नहीं हो सकता।

. यज्ञ समापन, आगंतुकों का प्रस्थान तथा युधिष्ठिर का दुख

यज्ञ का विघ्न समाप्त हुआ, अतएव यज्ञ संपन्न हुआ। ब्राह्मणों को खूब धन-दक्षिणा मिली, आगंतुक छककर खाये-पीये। इस यज्ञ में जब एक लाख ब्राह्मणों का भोजन हो जाता था तब शंख बजाया जाता था। दूध, दही, घी की मानो नहरें बह रही हों। अंतत: सब राजे-महाराजे तथा सामान्य लोग अपने-अपने घर चले गये। श्रीकृष्ण महाराज भी द्वारका चले गये। वेदव्यास भी अपने शिष्यों के साथ हिमालय जाने के लिए तैयार हुए। जाते समय वेदव्यास ने युधिष्ठिर से कहा–बैठ जाओ, जो पूछना हो पूछ लो। युधिष्ठिर ने कहा–भगवन! क्या शिशुपाल के मारे जाने पर उपद्रव समाप्त हो गया? वेदव्यास ने कहा–युधिष्ठिर! तुम्हीं को केंद्र बनाकर राजा लोग कटकर मरेंगे। यह काम दुर्योधन, भीम और अर्जुन के तिगड्डे में होगा।

युधिष्ठिर दुख से गरम सांसें लेने लगे और अपने भाइयों से उन्होंने कहा– जो कुछ व्यास जी ने कहा है, वह सब तुम लोगों ने सुना है न? उनकी यह बात सुनकर मैंने मरने का निश्चय कर लिया है। यदि यही नियति है तो मेरे जीने का क्या प्रयोजन है? अर्जुन ने कहा–राजन! इस भयंकर मोह में न पड़िये। यह विचार बुद्धि को नष्ट करने वाला है। युधिष्ठिर ने कहा–यदि भाइयों के विनाश का कारण बनने के लिए जीना है तो मेरे जीने का क्या लाभ? यदि जीना है, तो मेरी प्रतिज्ञा सब सुन लें–मैं किसी से कड़वा वचन नहीं बोलूंगा और वस्तुओं का वितरण उदारता से करूंगा। मैं अपने पुत्रों तथा भाइयों के पुत्रों में भेदभाव नहीं करूंगा, क्योंकि यह भेदभाव ही लड़ाई-झगड़े का कारण है (अध्याय –)।

मीमांसा

युधिष्ठिर का सम्राट बनने के मोह ने आगे के लिए दुख के बीज बो दिये। युधिष्ठिर ने कड़वे वचन और भेदजनित बरताव त्यागने का तो प्रण किया, परंतु अपने जुआड़ी आदत को त्यागने का प्रयास नहीं किया। युधिष्ठिर जुआ खेलने के आदी थे, परंतु खेलने में भोग्गा थे–अटट गंवार, जिसका परिणाम आगे आने वाला है।

. दुर्योधन का सभाभवन में भ्रम और मनस्ताप

सभाभवन से भीड़ हट जाने पर भी दुर्योधन सभाभवन में ही थे; क्योंकि वे घर के सदस्य थे। भीड़ हटने पर निश्चिंत होकर सभाभवन में घूमने और देखने लगे। एक जगह उनको जल होने का आभास हुआ, अतएव वे पहने हुए कपड़े ऊपर उठा लिये, किंतु वहां जल नहीं था। दूसरी जगह जल था, वहां वे थल समझकर बेधड़क जाने लगे और जल में गिर पड़े। भीम ने हंसी उड़ायी। वे बंद दरवाजे को खुला समझकर बढ़ने लगे और टकरा गये। खुले को बंद समझ कर आगे टटोलने लगे। इस बीच दुर्योधन उपहास के पात्र बन गये।

दुर्योधन को उपर्युक्त दुख तो घलुए में था; खास दुख तो था पांडवों के ऐश्वर्य, धन तथा प्रताप-प्रतिष्ठा को देखकर। इंद्रप्रस्थ से हस्तिनापुर जाते-जाते रास्ते में रथ पर बैठा दुर्योधन पांडवों की ईर्ष्या में मन-ही-मन जल रहा था। उसके दुख को देखकर उसके मामा गांधार-नरेश शकुनि ने कहा–तुम दुखी

क्यों हो? दुर्योधन ने कहा–मैं पांडवों की उन्नति देखकर ईर्ष्या से जल रहा हूं। कृष्ण ने भरी सभा में शिशुपाल को मार गिराया, परंतु वहां कोई नरेश कृष्ण से बदला लेने के लिए सामने नहीं आया। कृष्ण का यह महान अनुचित काम पांडवों के नाते सफल हो गया। मैं पांडवों के उत्कर्ष को देखकर ईर्ष्या-वश अत्यंत दुखी हूं। अतएव अब मैं आग में जल मरूंगा, विष खा लूंगा या जल में डूब मरूंगा। शकुनि ने समझाया परंतु दुर्योधन का दुख नहीं मिटा।

दुर्योधन ने शकुनि से कहा कि हम अपने शूर-वीरों को लेकर क्यों न इंद्रप्रस्थ पर हमला कर दें और उन पर विजय करके उनका सब कुछ अपना बना लें। शकुनि ने कहा–यह दुराशा छोड़ दीजिए। आप पांडवों को युद्ध में नहीं जीत पायेंगे। उनको जीतने का एक सरल उपाय है। युधिष्ठिर जुआ खेलने के रसिक हैं। यदि उनको इसके लिए बुलाया जाय तो हर्षपूर्वक आयेंगे। मैं जुआ खेलने में निपुण हूं। जुआ में दावं पर राज-काज आदि चढ़ाने का नियम रखा जाय। मैं युधिष्ठिर का सब कुछ जीत लूंगा। युधिष्ठिर जुआ-प्रेमी हैं, परंतु खेलने में भोले हैं। आप अपने पिता से इस बात को कहिए, आज्ञा मिलने पर मैं तैयार हूं। दुर्योधन ने कहा कि आप ही पिता जी से कहिए, मैं कुछ नहीं कहूंगा (अध्याय -)।

मीमांसा

दुर्योधन के पास भी हस्तिनापुर का राज्य है, परंतु वे उससे सुख नहीं ले पा रहे हैं, अपितु पांडवों की बढ़ोत्तरी से जलते हैं। हमें अपने मन में झांकना चाहिए कि ऐसा कुछ हमारे मन में तो नहीं है।

. धृतराष्ट्र और दुर्योधन की बातचीत

शकुनि ने धृतराष्ट्र के पास जाकर दुर्योधन का दुख बताया और कहा कि दुर्योधन आपका ज्येष्ठ पुत्र है। आप उसके दुख का पता लगाइए और उसके निवारण का उपाय कीजिए। धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से पूछा कि तुम क्यों दुखी हो? अपना दिल खोलकर कहो। दुर्योधन ने कहा–मैं अच्छा खाता-पहनता हूं, परंतु कायरों की तरह। संतोष लक्ष्मी और अभिमान का नाशक है। दया और भय भी वैसे ही दोषजनक हैं। इनका आचरण करने वाला ऊंचा पद नहीं पा सकता। पिता जी, युधिष्ठिर का ऐश्वर्य देखकर मुझे भोजन अच्छा नहीं लगता। इससे मेरे शरीर का रंग फीका पड़ गया है। राजन! मामा शकुनि जुआ खेलने में निपुण हैं।

युधिष्ठिर जुआ-रसिक हैं। उनको जुआ खेलने के लिए बुलाया जाय। मामाजी जुआ में उनकी राज्य-लक्ष्मी को हड़प लेने का उत्साह रखते हैं। धृतराष्ट्र ने कहा–महा बुद्धिमान विदुर मेरे मंत्री हैं। मैं उनके आदेश से चलता हूं। उनसे मिलकर और बात करके मैं समझ सकूंगा कि क्या उचित है। विदुर दूरदर्शी हैं। वे दोनों पक्षों का हित सोचकर बात बतायेंगे।

दुर्योधन ने राजा धृतराष्ट्र से कहा–राजन! विदुर जी जुआ के खेल की बात सुनकर मनाकर देंगे। राजन! यदि आप इससे मुख मोड़ेंगे तो मैं प्राणत्याग कर दूंगा। मेरे मर जाने पर आप विदुर के साथ रहकर सारी पृथ्वी के राज्य का सुख भोगिएगा। मेरे जीवित रहने से आपका क्या प्रयोजन है! धृतराष्ट्र दुर्योधन के फेवर में आ गये और उन्होंने जुआ खेलने के लिए एक विशाल सभाभवन तैयार करने के लिए आज्ञा दी, जिसमें सौ दरवाजे और एक हजार खंभे हों और सभा अत्यंत दर्शनीय हो। जब सभाभवन पूर्ण तैयार हो जाय, तब धीरे से आकर मुझे बताओ। इस प्रकार धृतराष्ट्र ने दुर्योधन की मनसा पूरी करने के लिए अपने कदम बढ़ाये। साथ-साथ विदुर को भी राय के लिए बुलाये।

विदुर दौड़े-दौड़े आये और राजा से उन्होंने कहा–राजन! मैं आपकी इस बात को स्वीकार नहीं करता। आप ऐसा काम न करें जिससे आप तथा पांडवों में फूट हो। धृतराष्ट्र ने कहा–विदुर! हम लोगों पर दैव की कृपा होगी, तो फूट नहीं होगी, कलह नहीं होगा। शुभ हो या अशुभ, हितकर हो या अहितकर जुआ का खेल आरंभ होना ही चाहिए। यह भाग्य से होता है। जब मैं, भीष्म, द्रोणाचार्य और तुम वहां रहेंगे, तो कोई गड़बड़ी नहीं होने पायेगी। तुम तीव्रगामी घोड़ों के रथ पर शीघ्र इंद्रप्रस्थ जाओ और युधिष्ठिर को बुला लाओ। विदुर! तुम मेरा यह निश्चय युधिष्ठिर को बताना। मैं दैव को प्रबल मानता हूं। जिसकी प्रेरणा से यह जुआ-खेल होने जा रहा है।

धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को बुलाकर कहा– दुर्योधन! तुम मेरे ज्येष्ठ पुत्र हो, ज्येष्ठ रानी से पैदा हुए हो। तुम पांडवों से द्वेष न करो। द्वेष करने वाला मृततुल्य है। युधिष्ठिर किसी को धोखा नहीं देते। जो तुम्हारे मित्र हैं वे उनके भी मित्र हैं। युधिष्ठिर तुमसे कभी द्वेष नहीं करते। दूसरे के धन को पाने की इच्छा करना नीचता है। अपने प्राप्त धन में संतुष्ट रहने वाला सुखी रहता है। धैर्य, विनम्रता, प्रमाद का त्याग सुख के साधन हैं। पांडु-पुत्र तुम्हारी भुजा हैं। उन्हें काटने का विचार मत करो। पांडव तुम्हारे भाई हैं। दोनों के पितामह एक हैं। उनसे द्वेष न करो।

दुर्योधन ने धृतराष्ट्र से कहा–पिता जी! जिसके पास अपनी बुद्धि नहीं है, वह शास्त्र पढ़कर क्या पायेगा? कलछी व्यंजनों में घूमकर भी उनका रस नहीं जानती। एक नौका में बंधी नौका चलने के समान आपकी बुद्धि विदुर की बुद्धि में बंधी है। स्वार्थ साधन में आपकी सावधानी नहीं है या आप मुझसे द्वेष करते हैं। आप अपने कर्तव्य को सदैव भविष्य पर टालते हैं। जब समाज का अगुआ ही दूसरी की बुद्धि पर चलता हो, तो उसके पीछे चलने वालों की क्या दशा होगी? बृहस्पति ने राजव्यवहार को लोकव्यवहार से पृथक बताया है। राजा को सदैव स्वार्थ साधना में लगा रहना चाहिए। असंतोष ही लक्ष्मी-प्राप्ति का मुख्य कारण है–*असंतोषः श्रियो मूलम्* (अध्याय , श्लोक)। इंद्र ने नमुचि से कभी वैर न करने की प्रतिज्ञा करके उस पर विश्वास का भरोसा दिया, परंतु समय पाकर उसका सिर काट लिया। जन्म से कोई शत्रु नहीं होता। एक प्रकार की जीविका वाले ही परस्पर शत्रु होते हैं। आपको शत्रु का ऐश्वर्य अच्छा नहीं लगना चाहिए। हर समय न्याय का बोझा सिर पर ढोना बुद्धिमानों के लिए भार ही है। जब तक मैं पांडवों का धन प्राप्त नहीं कर लेता तब तक मेरे मन को शांति नहीं मिलेगी। या तो पांडवों का धन पा लूंगा या युद्ध में मरकर सो जाऊंगा। जो आज मेरी दशा है, उसमें जीने से क्या लाभ है? पांडव निरंतर उन्नति कर रहे हैं, और हम नीचे जा रहे हैं।

धृतराष्ट्र ने बारंबार मना किया और पुनः कहा कि विदुर जी जुआ का परिणाम अच्छा नहीं मानते। जुआ मत खेलो। दुर्योधन ने कहा कि विदुर रहते हैं हमारी तरफ, और भला चाहते हैं पांडवों का। उनकी बात में पड़ना ठीक नहीं है। जुआ खेलने में न झगड़ा है और न युद्ध। यह तो खेलने वालों के लिए स्वर्ग का द्वार है। आप संशय छोड़कर युधिष्ठिर को निमंत्रण दीजिए। वे जुआड़ी हैं, किंतु जुआ के मर्म से अनभिज्ञ हैं। मामा शकुनि उनको अवश्य जीत लेंगे।

विदुर ने धृतराष्ट्र से मिलकर जुआ को भावी विनाश का कारण बताया; परंतु धृतराष्ट्र ने कहा कि यदि दैव प्रतिकूल न होकर तो मुझे कलह भी कष्ट नहीं दे सकता। सारा संसार दैव के अधीन हो चेष्टा कर रहा है। यह स्वतंत्र नहीं है। विदुर मेरी आज्ञा है, शीघ्र युधिष्ठिर को बुला लाओ। (अध्याय –)।

मीमांसा

दुर्योधन घोर अंधकार में है। उसके विचार उसके और संबंधित सबके लिए दुख पैदा करने वाले हैं। धृतराष्ट्र की बुद्धि पिचिर-पिचिर करने वाली है। वह स्थिर नहीं रहती। धृतराष्ट्र घोर दैववादी हैं।

. विदुर द्वारा निमंत्रण पाकर युधिष्ठिर का हस्तिनापुर आना

विदुर इंद्रप्रस्थ गये। युधिष्ठिर को बताये कि राजा धृतराष्ट्र ने पहले तुम्हारी मंगलकामना करके तुम्हें संदेश दिया है कि तुम्हारे सभागार के समान यहां भी सभागार बनाया गया है। तुम अपने भाइयों के साथ आकर दुर्योधन आदि भाइयों के सभागार को देखो। इस सभागार में जुआ खेला जाय और आपस में मन बहलाया जाय। राजन! आप जब वहां चलेंगे तो देखेंगे कि वहां धूर्त जुआरियों का जमघट है। युधिष्ठिर ने कहा कि जुआ तो झगड़ा–टंटा का कारण है। कौन समझदार जुआ खेलेगा? क्या आप जुआ खेलना अच्छा समझते हैं? विदुर ने कहा कि मैं जानता हूं कि जुआ झगड़े की जड़ है। मैंने रोका भी, परंतु राजा ने भेजा, तो मैं तुम्हारे पास आया। युधिष्ठिर ने कहा कि बताइये, वहां कौन–कौन जुआड़ी जुटे हैं? विदुर ने कहा कि जुआ के पंडित शकुनि हैं ही। इसके अलावा राजा विविंशति, चित्रसेन, सत्यव्रत, पुरुमित्र और जय भी विद्यमान हैं। युधिष्ठिर ने कहा कि तब तो वहां बड़े भयंकर कपटी और धूर्त जुआड़ी जुटे हैं। यद्यपि जुआ खेलने की मुझे इच्छा नहीं है, परंतु जुआ के लिए निमंत्रित होने पर मैं पीछे नहीं हट सकता, यह मेरा सदैव का नियम है। जैसे तेज रोशनी सामने पड़ने पर वह आंखों की ज्योति हर लेती है, वैसे दैव मनुष्य की बुद्धि हर लेता है। जैसे रस्सी में बंधे पशु मनुष्य के पीछे घूमते हैं, वैसे दैव से बंधे मनुष्य घूमते हैं। इतना कहकर युधिष्ठिर भाइयों तथा द्रौपदी के साथ हस्तिनापुर चल दिये।

हस्तिनापुर पहुंचकर युधिष्ठिर सबसे मिले और उन सबने इन सब का बड़ी गरमजोशी से स्वागत–सत्कार किया। भोजन–शयन हुआ। प्रातः जुआ खेलने की जगह सभाभवन में गये। वहां जुआरियों ने युधिष्ठिर का अभिनंदन किया। (अध्याय –)।

मीमांसा

जैसे धृतराष्ट्र दैववादी हैं, वैसे युधिष्ठिर भी दैववादी हैं। याद रखें, दैववादी सदैव धोखा खाते हैं। विषय–लंपट मनुष्य भी अपनी लंपटता को बुरा समझता है, परंतु वह अपने को उससे रोक नहीं पाता, वैसे जुआड़ी भी जुआ को बुरा समझता है, परंतु उससे अपने को रोक नहीं पाता। युधिष्ठिर की दशा यही है। युधिष्ठिर कहते हैं "जुआ खेलना बुरा है, परंतु निमंत्रित होने पर मैं पीछे नहीं हट सकता।" यह उनकी बुद्धि का दिवाला पिट जाना है।

. जुआ प्रारंभ और युधिष्ठिर की पूरी हार

शकुनि ने युधिष्ठिर से कहा–महाराज! सभा में पासे फेंकने का वस्त्र बिछा दिया गया है। सब आप ही की प्रतीक्षा कर रहे हैं। अब पासे फेंककर जुआ खेलने का अवसर मिलना चाहिए। युधिष्ठिर ने कहा–जुआ एक प्रकार से छल है, अतः पाप है। इसमें क्षत्रियोचित पराक्रम नहीं है और न इसकी कोई निश्चित नीति है। फिर इसकी प्रशंसा तुम क्यों करते हो? जुआरियों की बड़ाई छल-कपट की प्रवीणता में होती है। सज्जन इसकी प्रशंसा नहीं करते। तुम क्रूरतापूर्वक मुझे जीतने की इच्छा क्यों करते हो? शुकुनि ने कहा–हारने का भय तो मुझे भी रहता है, फिर भी मैं जुआ खेलता हूं। ध्यान दीजिए, श्रोत्रिय विद्वान शास्त्रार्थ में दूसरे विद्वान को शठता एवं छल-कपट से ही जीतता है, परंतु इसे जनसाधारण शठता नहीं कहते। यदि आप यह मानते हैं कि जुआ खेल में आपके साथ शठता की जायेगी, इसलिए आपको हार जाने का भय लगता है तो न खेलिए। युधिष्ठिर ने कहा–मैं निमंत्रण पर पीछे नहीं हटता, यह मेरा दृढ़ मत है। दैव बलवान है। मैं दैव के वश में हूं। अच्छा, तो यहां जमे हुए जुआरियों में किस जुआड़ी के साथ मुझे जुआ खेलना है? मेरे सामने बैठकर कौन दावं लगायेगा? इसका निर्णय हो जाय, तो जुए का खेल शुरू हो।

दुर्योधन ने कहा–दावं पर लगाने के लिए धन और रत्न मैं दूंगा, परंतु मेरी ओर से खेलेंगे मेरे मामा शकुनि। युधिष्ठिर ने कहा–दूसरे के लिए दूसरा जुआ खेले, यह तो ठीक नहीं लगता। विद्वानो, इस बात को समझ लें, फिर जुए का खेल आरंभ हो।

सभा में राजे-महाराजे आये और कहीं-कहीं एक-एक आसन पर दो-दो और कहीं अलग-अलग आसनों पर बैठ गये। भीष्म, द्रोण, कृप, विदुर धृतराष्ट्र के पीछे-पीछे खिन्न मन से आये और बैठ गये।

युधिष्ठिर ने कहा–मैं अपना हार दावं पर रखता हूं। यह उत्तम सोने का है और इसमें बहुमूल्य मणि रत्न जड़े हैं। इसके मुकाबले आप अपना कौन-सा धन दावं पर रखते हैं? दुर्योधन ने कहा–मेरे पास भी बहुत धन और मणियां हैं। मुझे अपने धन पर अहंकार नहीं है। आप इस जुए को जीतिए। इसके बाद पासे फेंकने की कला में प्रवीण शकुनि पासों को हाथ में लिया और फेंककर युधिष्ठिर से कहा–लो, यह दावं मैंने जीत लिया।

युधिष्ठिर ने कहा–मेरे पास हजारों निष्कों (स्वर्ण मुद्राओं) से भरी बहुत-सी पेटियां हैं। इसके अलावा खजाना और अक्षय धन है, अनेक प्रकार का

सुवर्ण है। यह सब धन मैंने दावं पर लगा दिया। शकुनि ने कहा–लो, यह धन भी मैंने जीत लिया।

इसके बाद रथ, दासियां, दास, हाथी, घोड़े, खजाने, एक-एक कर युधिष्ठिर हारते गये। इस बीच विदुर ने दुर्योधन को टोका, फटकारा और दुर्योधन ने विदुर को फटकारा। अंततः युधिष्ठिर सारा धन, राज-काज जुए पर लगाकर हार गये। फिर वे नकुल को दावं पर लगाकर हार गये। इसके बाद सहदेव को दावं पर लगाकर हार गये।

शकुनि ने कहा–आप नकुल और सहदेव को तो जुए में हार गये, भीम और अर्जुन को क्यों बचा रखे हैं? युधिष्ठिर ने कहा–मूर्ख! तू मेरे भाइयों में फूट डालना चाहता है? शकुनि ने कहा–राजन! धन-लोभी पाप करके नरक में गिरता है। अधिक उन्मत्त मनुष्य ठूंठ-काठ हो जाता है। आप आयु तथा गुणों में श्रेष्ठ हैं। आपको नमस्कार है। धर्मराज युधिष्ठिर! जुआरी जुआ खेलते समय, प्रायः हार की स्थिति में अंड-बंड बकता है जो न जाग्रत में दिखता है, और न स्वप्न में। युधिष्ठिर ने कहा कि अब मैं अर्जुन को दावं पर रखता हूं। शकुनि ने कहा–लो, मैंने जीत लिया। इसके बाद भीम को दावं पर रखा गया और शकुनि ने उन्हें भी जीत लिया।

शकुनि ने कहा–राजन! अब बिना हारा हुआ धन यदि आपके पास कुछ है तो बताइए। युधिष्ठिर ने अपने आप को दावं पर लगा दिया। शकुनि ने उन्हें भी जीत लिया और कहा–राजन! आपके पास अभी धन रहते हुए आपका स्वयं को दावं पर लगाना और हार जाना ठीक नहीं हुआ। अभी तो आपकी प्रियतमा द्रौपदी बची हुई है। अब उसे दावं पर लगाकर अपनी जीत कर लीजिए।

युधिष्ठिर ने कहा–"मैं द्रौपदी को भी दावं पर लगाता हूं।" इतना सुनते ही सभा से आवाज आयी–"धिक्कार है, धिक्कार है।" शकुनि ने द्रौपदी को भी जीत लिया। इस विषम स्थिति में भीष्म, द्रोण, कृप आदि के शरीर से पसीना छूटने लगा और विदुर अचेत होकर गिर पड़े। वाल्हीक, सोमदत्त, भीष्म, संजय, अश्वत्थामा, भूरिश्रवा, धृतराष्ट्र-पुत्र युयुत्सु नीचे मुंह किये लंबी सांस लेने लगे। परंतु धृतराष्ट्र अपनी विजय जानकर मन में प्रसन्न थे। वे उस प्रसन्नता को मुख की आकृति से न छिपा सके। वे बार-बार पूछते थे–क्या हमारे पक्ष की जीत हो रही है? दुःशासन तथा कर्ण को हर्ष हुआ, किंतु सभा के अन्य लोग आंसू गिराने लगे। शकुनि विजय के उत्साह में प्रमत्त हो रहा था (अध्याय -)।

. द्रौपदी का चीर–हरण

दुर्योधन ने विदुर से कहा–विदुर! तुम जाकर द्रौपदी को सभा में बुला लाओ। वह मेरे द्वारा जीत ली गयी है। वह आकर मेरे भवन में झाड़ू लगावे और दासियों के साथ रहे। विदुर ने दुर्योधन को बहुत फटकारा। फिर दुर्योधन ने अपने दूत प्रतिकामी से कहा–विदुर तो डरपोक हैं। तुम जाकर द्रौपदी को यहां ले आओ। प्रतिकामी ने जाकर द्रौपदी से कहा–आपको दुर्योधन ने जुआ–खेल में युधिष्ठिर से जीत लिया है। अब आपको धृतराष्ट्र के महल में दासी का काम करने के लिए ले चलना है।

द्रौपदी ने कहा–प्रतिकामिन! तू इस तरह कैसे कह रहा है? कौन राजा अपनी पत्नी को जुआ के दावं पर लगायेगा? क्या राजा युधिष्ठिर जुए के नशा में इतना उन्मत्त हो गये हैं कि उनके पास जुआरियों को देने के लिए दूसरा धन नहीं रह गया? दूत ने कहा–युधिष्ठिर सब कुछ हार गये। उसके बाद स्वयं को हार गये। इसके बाद वे आपको भी दावं पर लगाकर हार गये। द्रौपदी ने कहा–प्रतिकामिन! तुम सभा में जाकर जुआरी महाराज से पूछो कि–"आप पहले स्वयं को हारे हैं या मुझे?" सच्चाई जानकर मुझे सभा में ले चलो।

प्रतिकामी ने सभा में आकर युधिष्ठिर से कहा कि द्रौपदी आपसे पूछती हैं–"आप पहले अपने को हारे हैं या मुझे?" किंतु युधिष्ठिर कुछ बोल न सके। दुर्योधन ने कहा–प्रतिकामिन! द्रौपदी से कह दो कि वे सभा में स्वयं आ कर युधिष्ठिर से यह बात पूछें। प्रतिकामी ने पुनः द्रौपदी के पास संदेश दिया कि आपको वे सभा में बुला रहे हैं।

द्रौपदी ने कहा–यह विधाता का विधान है। बालक–वृद्ध सबको जगत में दुख मिलता है। संसार में धर्म ही श्रेष्ठ है। धर्म का पालन करने से वह हमारा कल्याण करेगा। प्रतिकामिन! तुम जाकर कौरववंशियों से पूछो–"मुझे इस समय क्या करना चाहिए? जैसी आज्ञा हो, मैं वैसा करूंगी।" प्रतिकामी ने जाकर सभा में द्रौपदी की बात दोहरा दी, किंतु दुर्योधन के हठी स्वभाव से डर कर सभी मुंह लटकाए बैठे रहे, कोई कुछ नहीं बोला।

दुर्योधन क्या करना चाहता है, ऐसा समझकर युधिष्ठिर ने द्रौपदी के पास एक ऐसा दूत भेजा जिसे वह पहचानती थी। युधिष्ठिर ने उसके द्वारा यह संदेश भेजा–द्रौपदी! यद्यपि तुम इस समय रजस्वला हो, तो भी तुम सभा में आकर अपने श्वसुर के सामने खड़ी हो जाओ। तुम्हें आयी हुई देखकर सभा के लोग दुर्योधन की निंदा करेंगे। दूत ने जाकर युधिष्ठिर का संदेश द्रौपदी को बता दिया

(अध्याय -)।

मीमांसा

युधिष्ठिर के विश्वस्त तथा द्रौपदी के परिचित दूत के संदेश से द्रौपदी सभा में आ गयी होगी। यही पाठ पुराना है। भारत विशेषज्ञ वासुदेवशरण अग्रवाल लिखते हैं–"द्रौपदी के कौरवों की सभा में लाये जाने की घटना महाभारत में दो प्रकार से दी गयी है। एक तो जब दुर्योधन ने द्रौपदी को लिवा लाने के लिए अपना दूत महल में भेजा, तब युधिष्ठिर को संभवतः मन में यह आशंका हुई कि द्रौपदी को लाने के लिए कहीं बल प्रयोग न किया जाय, अथवा द्रौपदी को ही यह संदेह उत्पन्न हो कि उसके वहां आने के विषय में उसके पति की क्या सम्मति है। अतएव युधिष्ठिर ने अपना विश्वस्त दूत भी महलों में भेजकर द्रौपदी को संदेश दिया कि वह वहां आ जाय। फलतः मलिनवसना द्रौपदी सभा में आकर अपने ससुर के सामने खड़ी हो गयी।...ज्ञात होता है कि यही उस घटना का संक्षिप्त और मूल रूप था।"

आगे लेखक पंडितों ने दुर्योधन तथा दुःशासन को अधिक उद्दंड सिद्ध करने के लिए तथा श्रीकृष्ण का वस्त्रावतार रूप चमत्कारी प्रसंग जोड़ने के लिए कथा को मोड़ दिया जो इस प्रकार है–

दुर्योधन ने कहा–दुःशासन! यह मेरा सेवक सूतपुत्र प्रतिकामी महा मूर्ख है। यह भीम को डरता है। तुम स्वयं जाकर द्रौपदी को पकड़ लाओ। हमारे शत्रु पांडव हमारे वश में हैं। वे तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। दुःशासन गया और द्रौपदी से कहा–पांचाली! आओ, तुम जुए में जीती जा चुकी हो। तुम लज्जा छोड़कर दुर्योधन को देखो। अभी राज-सभा में चलो, कौरवों की सेवा करो। द्रौपदी दुखी होकर धृतराष्ट्र की स्त्रियों के आवास की तरफ भागी। दुःशासन ने दौड़कर द्रौपदी का केश पकड़ लिया और सभा की ओर घसीट ले चला। द्रौपदी ने कहा–मैं रजस्वला हूं, मेरे शरीर पर केवल एक वस्त्र है। मुझे सभा में ले जाना अनुचित है।

द्रौपदी ने दूत द्वारा सभा में बैठे लोगों से पुछवाया था कि राजा युधिष्ठिर पहले अपने को हारे हैं कि मुझे? क्या मेरा हारा जाना उचित है? वस्तुतः युधिष्ठिर पहले अपने आप को हार गये थे। उसके बाद शकुनि के कहने पर द्रौपदी को दावं पर लगा कर हारे थे। इस न्याय से जब युधिष्ठिर स्वयं अपने को हार चुके हैं, तब दूसरे को दावं पर लगाने का उनका अधिकार ही नहीं रह

. भारत सावित्री, पृष्ठ , सस्ता साहित्य मंडल, संस्करण ।

गया। परंतु भीष्म भी इसके उत्तर में गोलमोल कर जाते हैं। वे कहते हैं कि धर्म का स्वरूप अत्यंत सूक्ष्म है, इसलिए मैं द्रौपदी के प्रश्न का ठीक विवेचन नहीं कर सकता। जो स्वामी नहीं है, वह पराये के धन को दावं पर नहीं लगा सकता; परंतु स्त्री को सदैव अपने पति के अधीन देखा जाता है। इसलिए मुझसे कुछ कहते नहीं बनता है। द्यूतविद्या में निपुण शकुनि की प्रेरणा से युधिष्ठिर ने द्रौपदी को जुए के दावं पर रखा है, परंतु स्वयं युधिष्ठिर इसे शकुनि का छल नहीं मानते हैं। इसलिए मैं द्रौपदी के प्रश्न का निर्णय नहीं कर सकता।

भीम ने कहा–जुआरियों के घर में प्राय: कुलटा स्त्रियां रहती हैं, परंतु वे भी उन्हें जुआ के दावं पर नहीं लगाते। द्रौपदी को दावं पर लगाना बहुत अनुचित हुआ है। सहदेव! आग लाओ, युधिष्ठिर के दोनों हाथ जला डालें। अर्जुन ने भीम को समझाकर उनका क्रोध शांत किया।

दुर्योधन के भाई विकर्ण से यह अन्याय सहन नहीं हुआ। उसने कहा–द्रौपदी के प्रश्न का उत्तर आप लोग क्यों नहीं देते? पितामह भीष्म तथा पिता धृतराष्ट्र और विद्वान विदुर मिलकर क्यों नहीं समाधान करते? कृपाचार्य तथा द्रोणाचार्य यहीं बैठे हैं। ये अपने विचार क्यों नहीं प्रकट करते? अनेक राजे-महाराजे यहां बैठे हैं, वे अपनी समझ के अनुसार कुछ तो कहें। राजाओ! आप लोग अपने विचार कहें जिससे पता लग जाय कि किसका क्या पक्ष है। इस बात को लेकर विकर्ण ने बारंबार राजाओं से बोलने का आग्रह किया, लेकिन पूरी सभा में कोई चूं नहीं जागा। तब विकर्ण ने अपने हाथों को मलते तथा लंबी सांस खींचते हुए कहा–कौरवों तथा अन्य राजाओ! आप लोग कुछ कहें या न कहें, मैं जो ठीक समझता हूं वह कहने जा रहा हूं–राजाओं के चार व्यसन होते हैं–शिकार, मदिरापान, जुआ और विषय-लंपटता। युधिष्ठिर जुआ में अत्यंत आसक्त हैं। इन्होंने धूर्त जुआरियों से प्रेरित होकर द्रौपदी को जुआ के दावं पर लगा दिया। पहली बात, द्रौपदी केवल युधिष्ठिर की पत्नी नहीं है, अन्य चार पांडवों की भी है। दूसरी बात, जब युधिष्ठिर पहले स्वयं को दावं पर हार गये हैं, तो द्रौपदी को दावं पर लगाने का उनका अधिकार ही नहीं रह गया। अतएव मैं द्रौपदी को जीती हुई नहीं मानता। यह सुनकर सभा के लोग विकर्ण की प्रशंसा करने लगे और शकुनि की निंदा। सभा में कोलाहल मच गया।

कर्ण ने विकर्ण को उत्तर देते हुए कहा–धृतराष्ट्र पुत्र विकर्ण! संसार में ऐसी भी वस्तुएं होती हैं जो उलटा फल देती हैं। अरणि से अग्नि उत्पन्न होती है और वह अरणि को ही जला डालती है। इसी प्रकार कोई-कोई अपने कुल के ही नाशक होते हैं। द्रौपदी ने बारंबार निवेदन किया, परंतु सभा में कोई इसका उत्तर

नहीं दिया, क्योंकि ये सब यह मानते हैं कि द्रौपदी को दुर्योधन ने धर्मपूर्वक जीता है। विकर्ण! तुम बालक होकर वृद्धों की तरह बात करते हो। जब युधिष्ठिर ने सभा के बीच में जुए के दावं पर अपना सर्वस्व लगा दिया, तो सर्वस्व में द्रौपदी भी दावं पर चढ़ गयीं, क्योंकि ये उनके सर्वस्व के भीतर हैं। युधिष्ठिर ने अपनी वाणी से कहकर द्रौपदी को दावं पर लगाया और उनके चार भाइयों ने मौन होकर उसका अनुमोदन किया, फिर किस हेतु द्रौपदी जीती हुई नहीं हैं? यदि कहो कि वे रजस्वला हैं, उन्हें बलपूर्वक सभा में लाया गया, तो उसके उत्तर में मेरी बात सुनो। शास्त्र में स्त्री के लिए एक ही पति का विधान है, किंतु द्रौपदी तो अनेक पतियों से जुड़ी है; अतएव यह निश्चित ही वेश्या है– "*बन्धकीति विनिश्चिता* (सभा० ,)।" अतएव इसका सभा में लाया जाना कोई अनोखी बात नहीं है। यह चाहे एक वस्त्र में या नंगी हो, तो भी सभा में लायी जा सकती है। वस्तुतः पांडवों का जो कुछ धन है, द्रौपदी और स्वयं पांडव शकुनि द्वारा धर्मपूर्वक जीत लिया गया है। दु:शासन! यह विकर्ण महामूढ़ है, परंतु विद्वानों जैसी बात बघारता है। तुम पांडवों और द्रौपदी के वस्त्र उतार लो।

कर्ण की बात सुनकर सभी पांडव स्वयं अपना उत्तरीय वस्त्र (चादर) उतार कर सभा में बैठ गये। इसके बाद दु:शासन ने द्रौपदी का वस्त्र बलपूर्वक खींचना आरंभ किया। द्रौपदी ने श्रीकृष्ण की प्रार्थना आरंभ की। श्रीकृष्ण ने वस्त्रावतार धारण किया। दु:शासन वस्त्र खींचता जाता और अनेक रंगों का वस्त्र द्रौपदी के शरीर पर प्रकट होता जाता। सभा के लोग चकित रह गये। सब द्रौपदी की प्रशंसा तथा दु:शासन की निंदा करने लगे। भीम ने क्रोधपूर्वक गर्ज कर कहा कि मैं एक दिन दु:शासन की छाती फाड़कर इसका रक्त पीऊंगा। यदि ऐसा न करूं तो मेरी कुगति हो।

विदुर ने राजाओं से कहा कि द्रौपदी के प्रश्न का आप लोग विवेचन करें, परंतु कोई कुछ नहीं बोला। वस्त्रावतार भगवान का भी प्रभाव कर्ण और दु:शासन पर नहीं पड़ा। कर्ण ने कहा–दु:शासन! इस दासी द्रौपदी को अपने घर ले जाओ। दु:शासन ने भरी सभा के बीच से द्रौपदी को घसीटना आरंभ किया (अध्याय)।

मीमांसा

कैसा जमाना था और उन लोगों का कैसा धर्म था, यह सहज समझा जा सकता है। सबसे निकृष्ट बुद्धि धर्मराज कहलाने वाले युधिष्ठिर की थी जिसने

सारा पाप और विपत्ति को निमंत्रित किया।

रही वस्त्रावतार की कल्पना, यह केवल मिथ्या कल्पना ही है। असंख्य ईश्वर मिलकर किसी वस्त्र में एक सूत नहीं बढ़ा सकते, जब तक उसमें ताना-बाना डालकर वयन न किया जाय। भगवान वस्त्रावतार न लेकर युधिष्ठिर और दुर्योधन के मन में सुबुध्यावतार ले लेते, तो काम अपने आप बन जाता। धर्मात्मा, महात्मा, पैगंबर, अवतार, देवता, ईश्वर और धर्म के नाम पर असंख्य चमत्कार गढ़े गये हैं और आज भी गढ़े जाते हैं जो केवल मानसिक कूड़ा-कचड़ा हैं और उन्हीं के नीचे पड़े हुए भावुक धार्मिक कहलाने वाले सड़ते हैं। न उनकी बुद्धि में उज्ज्वल कर्म-सिद्धांत आता है, न विश्व की कारण-कार्य-व्यवस्था की समझ आती है। सारे चमत्कार केवल छल-कपट हैं।

वासुदेवशरण अग्रवाल लिखते हैं–"इस प्रसंग में यह कहना आवश्यक है कि जिस समय दुःशासन ने द्रौपदी के वस्त्र खींचना आरंभ किया उस समय द्रौपदी ने जो कृष्ण से प्रार्थना की, वह प्रसंग महाभारत पूना संस्करण में प्रक्षिप्त होने के कारण पाद-टिप्पणी में चला गया है, क्योंकि अधिकांश हस्तलिखित प्रतियों के प्रमाण से ऐसा ही सिद्ध हुआ है।"

संसार में सर्वत्र कारण-कार्य की व्यवस्था है जो अनादि-अनंत एवं स्वतः निहित है। उसके जाल से कोई बच नहीं सकता। सबको अपनी करनी का फल देर-सबेर भोगना है। यह नियम रूपी ईश्वर परम सत्य है। इसलिए विश्व-नियम की परख कर उसके अनुसार अपना आचरण करना चाहिए। अपने आप पर संयम और दूसरों के साथ शील का व्यवहार करके ही मनुष्य सुखी रह सकता है।

. धृतराष्ट्र का पांडवों के साथ उत्तम बरताव

द्रौपदी ने कहा–मैं धर्मराज युधिष्ठिर की पत्नी तथा उनके समान वर्ण की कन्या हूं। आप सभा के लोग बतावें कि मैं दासी हूं अथवा अदासी? कुरु-वंशियो! आप बतावें कि मैं जीती गयी हूं या नहीं? मैं आपका निर्णय सुनना चाहती हूं, फिर वैसा कार्य करूंगी। उसके उत्तर में भीष्म ने पहले कही हुई बात दोहरा दी कि धर्म की बात गहन है। उस पर निर्णय कर पाना टेढ़ी खीर है। इसका निर्णय स्वयं युधिष्ठिर ही करें।

. भारत सावित्री, पृष्ठ , सस्ता साहित्य मण्डल, संस्करण ।

दुर्योधन ने मुस्कराते हुए द्रौपदी से यों कहा–द्रौपदी! तुम्हारे प्रश्न का उत्तर मैं तुम्हारे पतियों के ऊपर छोड़ता हूं। भीम, अर्जुन, सहदेव तथा नकुल ही इसके विषय में बतावें। राजाओं के बीच तुम्हारे पति कह दें कि युधिष्ठिर का तुम्हें दावं पर रखने का कोई अधिकार नहीं था, इस प्रकार सभी पांडव मिलकर युधिष्ठिर को झूठा सिद्ध कर दें, फिर तुम दास-भाव से मुक्त कर दी जाओगी। युधिष्ठिर स्वयं ही कह दें कि तुमको दावं पर रखने का अधिकार इनको था कि नहीं; फिर स्वतः निर्णय हो जायेगा कि तुम दासी हो या अदासी। द्रौपदी! सभी कुरुवंशी तुम्हारे लिए दुखी हैं। तुम्हारे मंदभाग्य पतियों को देखकर तुम्हारे प्रश्न का उत्तर ये नहीं दे पा रहे हैं।

सभी सभासद दुर्योधन के कथन पर हर्षित होकर उच्च स्वर में बहुत-बहुत प्रशंसा करने लगे और वस्त्र हिलाने लगे। दूसरी ओर हाय-हाय कहकर आर्तनाद होने लगा। इसके बाद सब युधिष्ठिर की तरफ देखने लगे कि वे क्या कहते हैं?

भीम ने कहा–मैं बड़े भाई युधिष्ठिर का अदब रखता हूं। अर्जुन भी मुझे रोक रहे हैं, अन्यथा मैं यहीं कौरवों को रगड़ देता। कर्ण ने कहा–दास, पुत्र और सदा परतंत्र स्त्री, ये तीनों धन के स्वामी नहीं होते। जिसका पति ऐश्वर्य खो दिया है, ऐसे निर्धन दास की पत्नी और दास के पूरे धन पर दास के स्वामी का अधिकार होता है। अतएव द्रौपदी! अब तुम दुर्योधन के परिवार की सेवा करो। अब धृतराष्ट्र के पुत्र ही तुम्हारे स्वामी हैं, कुंती-पुत्र नहीं। अब तुम जल्दी दूसरा पति चुन लो, जिससे जुआ के दावं पर चढ़कर तुम्हें पुनः दासी न बनना पड़े। स्वतंत्र पति का चुनाव तुम जैसी स्त्री के लिए निंदनीय नहीं है। दासी की स्वेच्छाचारिता प्रसिद्ध ही है; अतएव तुम्हें दास्यभाव प्राप्त हो। तुम्हारे सभी पति हारे गये हैं, इसलिए ये सब तुम्हारे पति नहीं हैं। युधिष्ठिर को क्या कोई दूसरा विकल्प नहीं था, जिसने तुम्हें जुए के दावं पर लगाया?

उपर्युक्त बातें सुनकर भीम को बड़ा दुख हुआ। उन्होंने कहा–राजा युधिष्ठिर! मुझे कर्ण पर क्रोध नहीं आ रहा है। जो उन्होंने बताया है दास-धर्म वही है। महाराज! यदि आप इस द्रौपदी को जुए के दावं पर न लगाते, तो क्या शत्रु हमें ऐसी बात कह पाते?

उक्त बातें सुनकर दुर्योधन ने युधिष्ठिर से कहा–राजन! भीम, अर्जुन, नकुल तथा सहदेव आपके आज्ञाकारी हैं। आप ही द्रौपदी के प्रश्न पर कुछ अपना विचार कहिए। ऐसा कहने के बाद दुर्योधन ने अपनी बाईं जांघ का वस्त्र हटाकर

द्रौपदी को मुस्कराते हुए देखा। इसी समय भीम ने दुखी होकर प्रतिज्ञा की कि समय आने पर मैं दुर्योधन की जांघ को गदा से तोड़ूंगा। विदुर जी यह सब देख-सुन कर कांप गये। दुर्योधन आदि कौरवों को सचेत किया कि वे अनर्थ न करें। अन्यथा उनका विनाश रखा-रखाया है।

दुर्योधन ने पुनः कहा–द्रौपदी! मैं भीम, अर्जुन, नकुल एवं सहदेव की बात मानने के लिए तैयार हूं। ये कह दें कि युधिष्ठिर को तुम्हें जुए के दावं पर रखने का कोई अधिकार नहीं था, तो तुम दासीपन से मुक्त कर दी जाओगी।

अर्जुन ने कहा–युधिष्ठिर पहले हमें दावं पर लगाने के लिए अधिकारी थे, परंतु जब वे अपने शरीर को ही हार गये, तो वे किसके स्वामी रहे? इस बात पर कौरव-पक्ष विचार करे।

विदुर तथा गांधारी ने धृतराष्ट्र से निवेदन किया कि वे स्थिति को सम्हालें। धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को डांटा और नम्र हो द्रौपदी से कहा–बहू द्रौपदी! तू मेरी पुत्रवधुओं में श्रेष्ठ है। तुम्हें जो इच्छा हो मुझसे वर मांगो। द्रौपदी ने कहा कि आप मेरे पति युधिष्ठिर को दासता से मुक्त कर दें। धृतराष्ट्र ने कहा–मैंने उन्हें मुक्त किया। अब दूसरा वर मांगो। द्रौपदी ने कहा–हमारे अन्य चार पति भी दासभाव से मुक्त कर दिये जायं। धृतराष्ट्र ने कहा–मैंने उन चारों को भी मुक्त किया। अब तीसरा वर मांगो। द्रौपदी ने कहा–लोभ पाप की जड़ है। अब मैं और वर नहीं मांग सकती। मेरे पति स्वतंत्र हो गये। अब वे अपनी उन्नति का काम स्वयं कर लेंगे।

कर्ण ने कहा–"बहुत स्त्रियां होती हैं, परंतु द्रौपदी ने जो आज काम कर दिखाया वह अद्‌भुत है। पांडव डूब रहे थे, उन्हें पार लगाने के लिए द्रौपदी नाव बन गयी।" भीम यह बात सुनकर क्रुद्ध हो गये। वे दुखी होकर बोले–"हाय, पांडवों को उबारने वाली एक स्त्री हुई–*स्त्रीगतिः पाण्डुपुत्राणामित्युवाच सुदुर्मनः* (सभा०   ,   )। हमारी पत्नी द्रौपदी दूसरे से छू गयी है, अतएव वह अपवित्र हो गयी है। अब से इससे उत्पन्न पुत्र किस लायक होगा?" अर्जुन ने कहा– "भीम! उत्तम मनुष्य नीचों द्वारा कही या न कही गयी कड़वी बातों का कभी उत्तर नहीं देते। उत्तम पुरुष दूसरों के उपकारों की याद करते हैं, वैर और कड़वी बात की नहीं। ऐसी विनम्र रहनीवालों को स्वाभाविक सर्वत्र आदर मिलता है।" भीम को ये बातें अच्छी नहीं लगीं। वे विरोधियों को मारने के लिए बमकने लगे, किंतु अर्जुन उन्हें शांत करते रहे। युधिष्ठिर ने भी उन्हें रोका और वे हाथ जोड़कर धृतराष्ट्र के पास गये और उन्होंने विनम्रता से कहा–महाराज! आप

हमारे स्वामी हैं। आज्ञा दें, हम क्या करें? हम आपकी आज्ञा के अधीन रहना चाहते हैं। धृतराष्ट्र ने कहा—तुमने जुआ खेल में जो कुछ दावं पर लगा कर हारा है, वह सब मैं तुम्हें लौटाये देता हूं। तुम जाओ और अपना राज-काज सम्हालो। मेरी बातों पर ध्यान देना—जहां सद्बुद्धि है वहीं शांति है। लोग कुल्हाड़ी कठोर पत्थर या लोहे पर नहीं चलाते, अपितु नरम लकड़ी पर चलाते हैं। वे ही उत्तम मनुष्य हैं जो वैर को न याद रखकर, गुणों को देखते हैं और किसी से विरोध नहीं करते। दूसरे द्वारा किये गये उपकार की याद रखे, उनके वैर को नहीं। सज्जन दूसरे की भलाई करते हैं, बदला लेने की भावना नहीं रखते। नीच मनुष्य साधारण बात में भी कटु वचन बोलता है, मध्यम मनुष्य दूसरे के कटु वचन कहने या प्रत्युत्तर में कटु वचन कहता है; परंतु उत्तम मनुष्य किसी के कटु वचन कहने पर भी कटु वचन नहीं कहते। उत्तम मनुष्य अपने अनुभव से काम लेते हैं, अतएव वे दूसरे के दुख-सुख को अपने समान जानते हैं। इसलिए वे सबके साथ उत्तम बरताव करते हैं। वे आर्यमर्यादा में रहते हैं, इसलिए उनके दर्शन मात्र से लोगों को आनंद मिलता है। तुम दुर्योधन के कठोर बरताव की याद दिल से निकाल देना। तुम अपनी माता गांधारी और तुम्हारे सामने बैठे मुझ अंधे बूढ़े ताऊ को देखो। युधिष्ठिर! तुम में धर्म है, अर्जुन में धैर्य है, भीम में बल है और नकुल-सहदेव में श्रद्धा और गुरुभक्ति है। तुम लोगों का भला हो। अब तुम खांडववन को जाओ, इंद्रप्रस्थ की राजगद्दी सम्हालो और दुर्योधन के प्रति भाईचारे का भाव बनाये रखना। इसके बाद पांडव इंद्रप्रस्थ चले गये (अध्याय –)।

मीमांसा

इतना सारा घोर उपद्रव होने के बाद धृतराष्ट्र के बात-बरताव अत्यंत प्रशंसनीय रहे। परंतु जब बात यहीं थम जाती तो कितना आनंद होता!

. दोबारा जुआ का खेल और पांडवों का वनवास

दुर्योधन कर्ण और शकुनि के साथ बैठे थे। दु:शासन दौड़ता आया और कहा—बुड्ढे ने सर्वनाश कर दिया—*स्थविरो नाशयत्यसौ* (सभा० ,)। हम लोगों ने जो धन बड़े कष्ट से प्राप्त किया था, उसने सब कुछ शत्रुओं को दे दिया। दुर्योधन ने जाकर धृतराष्ट्र से कहा—पिता जी! आप सर्प को सिर पर चढ़ाकर कुशल चाहते हैं। पांडवों का जो यहां अपमान हुआ है, वे

उसका बदला अवश्य लेंगे। अतएव मेरा विचार है कि बारह वर्ष वनवास की शर्त रखकर पांडवों के साथ एक बार पुनः जुआ खेला जाय। इस प्रकार हम इनको अपने अधीन कर सकेंगे। जुए में हार जाने पर 'वे' या 'हम' मृगचर्म धारणकर वनवास करें। तेरहवें वर्ष अज्ञातवास करें। यदि उनका पता लग जाय तो वे पुनः बारह वर्ष वनवास करें। वे या हम दोनों पर यह शर्त लागू रहे। जो हारे वह ऐसा करे। यदि जुए में पांडव हार गये तो उनके तेरह वर्ष के काल में हम जड़ जमा लेंगे और तेरहवें वर्ष उनके आने पर उन्हें युद्ध में जीत लेंगे।

धृतराष्ट्र ने कहा–यदि पांडव दूर निकल गये हों तो भी उन्हें बुला लो और जुए का एक दावं फिर हो जाय। यह बात जब लोग सुने तो द्रोणाचार्य, सोमदत्त, वाह्लीक, कृपाचार्य, विदुर, अश्वत्थामा, युयुत्सु, भूरिश्रवा, भीष्म, विकर्ण आदि ने इसका विरोध किया और कहा कि अब जुआ नहीं होना चाहिए तभी शांति रहेगी। किंतु दुर्योधन आदि के चक्कर में पड़कर धृतराष्ट्र ने पुनः जुआ खेलने के लिए युधिष्ठिर को बुलाने के लिए आदेश दे ही दिया।

गांधारी अपने पति धृतराष्ट्र को समझाने लगी–"राजन! आप अपने ही दीप से इस कुल का नाश न कीजिए। बंधे हुए पुल को कौन तोड़ेगा? वैर की बुझी हुई आग को कौन भड़कायेगा? कुंती के शांतिपरायण पुत्रों को कुपित न कीजिए। आप सब कुछ जानते हैं। तो भी मैं आपको याद दिलाती हूं। आप अपने पुत्रों को अपने नियंत्रण में रखिए। ऐसा न हो कि वे सब मर्यादा छोड़कर अपने प्राण खो दें और आपका बुढ़ापा अकेले कटे। आपने पुत्र–मोह में पड़कर जो करना चाहिए वह नहीं किया। उसी का फल आज आपको मिल रहा है। यह समझ लें कि समूचे कुल के नाश का निमंत्रण हो रहा है। आप प्रमाद मत करें। किसी का हड़पा हुआ धन विनाशशील है, नीतिपूर्वक प्राप्त धन पुत्र–पौत्रों तक चलता है।" धृतराष्ट्र ने कहा–"इस कुल का नाश भले ही हो जाय, परंतु मैं दुर्योधन को रोक नहीं सकता। ये सब जैसा चाहते हैं, होने दो। पांडव लौटें और मेरे पुत्र उनसे जुआ खेलें।"

प्रतिकामी दूत गया। युधिष्ठिर बहुत दूर निकल गये थे, प्रतिकामी ने बताया कि धृतराष्ट्र आपको पुनः जुआ खेलने के लिए बुला रहे हैं। युधिष्ठिर ने कहा– "सब प्राणी विधाता के अधीन हैं। उनके विधान को कोई टाल नहीं सकता। लगता है कि मुझे पुनः जुआ खेलना पड़ेगा। जुआ विनाश का कारण है, ऐसा जानते हुए मैं निमंत्रण का उल्लंघन नहीं कर सकता।"

यहीं महाभारतकार ने लिखा है–"सोने का जानवर होना असंभव है, तो भी श्रीराम स्वर्णमय प्रतीत होने वाले मृग को देखकर उसमें लुभा गये। सच है, जिनका पतन निकट आ जाता है, प्रायः उनकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है।"

युधिष्ठिर जुआ के अड्डे पर लौट आये और वहां बैठ गये। शकुनि ने युधिष्ठिर से कहा कि हमारे बूढ़े महाराज ने जो आपको सब धन लौटा दिया है वह बहुत अच्छा किया है। अबकी जुए के खेल में एक ही दावं रखा जायेगा, वह है कि यदि आपने हमें जुए में हरा दिया, तो हम मृगचर्म धारण कर वन में बारह वर्ष वास करेंगे और तेरहवां वर्ष हम जनसमूह में रहकर अज्ञातवास करेंगे। यदि हम तेरहवें वर्ष में लोगों द्वारा ज्ञात हो जायेंगे, तो पुनः बारह वर्ष वनवास करेंगे। यदि हम जीत गये तो द्रौपदी सहित आप पांचों पांडवों को इसी शर्त के अनुसार बारह वर्ष वनवास तथा एक वर्ष अज्ञातवास में रहना पड़ेगा और यदि आप तेरहवें वर्ष में हमारी जानकारी में आ गये, तो पुनः आपको बारह वर्ष वनवास में रहना पड़ेगा। तेरह वर्ष शर्त के अनुसार रहकर पुनः अपना राज्य प्राप्त कर सकते हैं।

सभा में लोग धिक्कारने लगे और कौरव तथा युधिष्ठिर की बुद्धि को कोसने लगे। युधिष्ठिर ने शकुनि से कहा–"स्वधर्म का पालन करने वाला मेरे-जैसा राजा जुए के लिए निमंत्रण पाने पर कैसे पीछे हट सकता है। इसलिए शकुनि! मैं तुम्हारे साथ जुआ खेलूंगा। शकुनि ने पासा उठाया और उसे फेंककर कहा–"लो, मैंने जीत लिया।"

पांडव हार गये। उन्होंने वनवास की दीक्षा ली, सब ने मृगचर्म धारण किया। आगे दुःशासन ने पांडवों पर बड़ा-बड़ा व्यंग्य किया। यहां तक कि पांडवों को मृगचर्म धारण किये देखकर "ओ बैल, ओ बैल" भी कहा। भीम आदि ने तेरह वर्ष के बाद कौरवों को मारने की बात कही। अर्जुन ने कहा कि समझदार मनुष्य अपनी कार्य योजना पहले नहीं प्रकट करता है।

युधिष्ठिर ने भीष्म, धृतराष्ट्र, सोमदत्त, वाल्हीक, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, विदुर, युयुत्सु, संजय तथा अन्य राजाओं और लोगों से वन जाने के लिए विदा ली और कहा कि हम तेरह वर्ष के बाद पुनः आपके दर्शन करेंगे। कौरव लज्जा-वश मौन रह गये। विदुर ने कहा कि कुंती वृद्धा हैं। वे वन जाने

. **असंभवे हेममयस्य जन्तोस्तथापि रामो लुलुभे मृगाय।**
प्रायः समासन्नपराभवाणां धियो विपर्यस्ततरा भवन्ति

(महाभारत, सभापर्व, अध्याय , श्लोक)

योग्य नहीं हैं। वे मेरे घर में रहेंगी। नगरवासी बहुत दुखी हुए। धृतराष्ट्र भी दुखी हो गये। द्रौपदी सहित पांचों पांडव और साथ में पुरोहित धौम्य वनवास के लिए निकल गये (अध्याय –)।

मीमांसा

युधिष्ठिर धर्म की दोहाई देते हैं–"स्वधर्म का पालन करने वाला मेरे–जैसा राजा जुए के लिए निमंत्रण पाने पर कैसे पीछे हट सकता है? अतएव शकुनि! मैं तुम्हारे साथ जुआ खेलूंगा।" युधिष्ठिर का धर्म क्या है, पाठक स्वयं समझें।

. दोबारा जुआ का खेल और पांडवों का वनवास

सद्गुरवे नमः

महाभारत मीमांसा

तीसरा : वन पर्व

. तृष्णा–त्याग, अतिथि–सत्कार, सम्यक आचरण और सूर्य की बटलोई

युधिष्ठिर अपने भाइयों और द्रौपदी को लेकर हस्तिनापुर से निकलकर उत्तर दिशा को चले। नगरवासी दुखी होकर कौरवों को कटु कहने लगे। बहुत–सी जनता पांडवों के पीछे चल दी। युधिष्ठिर के रोकने से वे कहने लगे–फूलों के संपर्क से सभी वस्तुएं सुगंधित हो जाती हैं और गंदी वस्तुओं के संसर्ग से गंदी, वैसे अच्छे लोगों की संगत से मन पर अच्छा प्रभाव पड़ता है और बुरे लोगों की संगत से बुरा प्रभाव पड़ता है। हम आपके साथ रहेंगे। युधिष्ठिर ने कहा–हमारे पितामह भीष्म, राजा धृतराष्ट्र, विदुर, मेरी माता कुंती अन्य सगे–संबंधी हस्तिनापुर में हैं। आप लोग लौट जायं, आप बहुत दूर तक चले आये। मेरे स्वजन आपके पास धरोहर रूप में हैं। उनके प्रति आपके मन में स्नेहभाव रहना चाहिए। इससे मेरा सत्कार हो जायेगा। पुरवासी लौट गये। पांडव रथ पर बैठकर गंगा के किनारे प्रमाणकोटि नामक बड़े वट के पास आये। वे वहीं उस रात केवल जल पीकर रहे। कुछ ब्राह्मण भी स्नेह–वश वहां चले आये थे, वे भी वहां रहकर पांडवों का मनोरंजन किये।

सबेरा होने पर जब पांडव वन की तरफ प्रस्थान करने लगे, तब भिक्षान्नभोजी ब्राह्मण, जो उनके साथ आ गये थे, वे भी उनके साथ चलने के लिए तैयार हो गये। युधिष्ठिर ने कहा–हम तो हारे जुआरी अपना दंड भोगने वन में जा रहे हैं। हे ब्राह्मणो! आप लोग हमारे साथ दुख उठाने क्यों चलने की इच्छा करते हैं? वन में बहुत कष्ट है। वहां सांप–बिच्छू आदि विषैले जंतु हैं। मेरे भाई बहुत दुखी हैं। वे अपने लिए आहार जुटा लें, इतना बहुत है, आपके लिए वे कहां से आहार लायेंगे? अतएव आप लोग अपने–अपने घर चले जायं।

ब्राह्मणों ने कहा–हम अपने लिए स्वयं आहार जुटा लेंगे। आपको हमारी चिंता नहीं करना पड़ेगा। हम अपना अभीष्ट चिंतन तथा जप करेंगे और आपको अच्छी–अच्छी कथाएं सुनाकर प्रसन्नतापूर्वक आपके साथ रहेंगे।

युधिष्ठिर ने कहा–आपकी तरफ से ऐसा कहना ठीक है, परंतु मैं अपना कर्तव्य नहीं निभा पाऊंगा तो मुझे कष्ट होगा। आप लोग स्वयं अपना आहार जुटाएं यह मैं सह नहीं पाऊंगा। आपकी हमारे प्रति सहानुभूति काफी है। यह कहकर युधिष्ठिर मौन हो पृथ्वी पर बैठ गये। उन ब्राह्मणों में अध्यात्मरत, सांख्य–योग में कुशल विद्वान शौनक थे। उन्होंने कहा–"शोक के हजारों और भय के सैकड़ों स्थान हैं। वे मूर्ख मनुष्यों में रोज–रोज अपना प्रभाव डालते हैं, किंतु विवेकी पर अपना प्रभाव नहीं डाल सकते।" ज्ञानविरुद्ध, दोषयुक्त और कल्याणनाशक कर्मों में ज्ञानी नहीं फंसते। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि तथा सत्शास्त्रों के स्वाध्याय से अध्यात्म में दृढ़ हुई बुद्धि शांति का कारण है। अर्थ–संकट, स्वजनों पर विपत्ति तथा शारीरिक दुख में भी ज्ञानी दुखी नहीं होते। पूर्वकाल में जनक ने कहा था–सारा संसार मानसिक तथा शारीरिक दुखों से पीड़ित है। उसकी शांति का उपाय है। रोग, अप्रिय घटना, अधिक परिश्रम तथा प्रिय वस्तुओं का वियोग, इन कारणों से दुख प्राप्त होता है। इनका चिंतन न करना और यदि चिंतन करना तो सकारात्मक। ये दुख-निवारण के साधन हैं। इसे क्रियायोग कहते हैं। समझदार लोग प्रिय वचन बोलकर तथा खान–पानादि का अच्छा प्रबंध करके साथ के मनुष्यों को प्रसन्न रखते हैं। मन के दुख से शरीर वैसे दुखी हो जाता है जैसे आग के संसर्ग से जल गरम हो जाता है। ज्ञान से मन का दुख शांत करना चाहिए। मन का दुख शांत होने पर शरीर का दुख भी शांत होता है।

मन के दुख का मूल कारण स्नेह है। आसक्ति से भय, शोक, हर्ष, मानसिक क्लेश उत्पन्न होते हैं। आसक्ति से विषयों में मोह होता है, मोह दुख उत्पन्न करता है। जैसे पेड़ के खोखले में लगी आग पूरे पेड़ को जला डालती है, वैसे मन की आसक्ति पूरे जीवन को जला डालती है। अनासक्त तथा त्यागी मनुष्य किसी से द्वेष नहीं करता। वह प्राणिमात्र से निर्वैर रहता है, इसलिए मुक्त रहता है। अतएव अनुकूल मनुष्यों और धन को पाकर उनमें आसक्ति न करे। ज्ञानी के मन पर आसक्ति उसी प्रकार नहीं ठहरती जिस प्रकार कमल–पत्र पर जल नहीं ठहरता। मन में राग होने से काम–वासना जगती है। काम–वासना से भोग की

. शोकस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च।
दिवसे दिवसे मूढमाविशन्ति न पंडितम्

(महाभारत, वन पर्व, अध्याय , श्लोक)

इच्छा होती है। भोग से तृष्णा बढ़ती है; और तृष्णा मन को निरंतर उद्वेगित करती है। इससे अनेक पाप होने लगते हैं। सर्व अनर्थ उत्पन्न करने वाली तृष्णा का त्याग करने वाला ही सच्चे अर्थ में सुखी होता है। तृष्णा का अंत नहीं है। इसे त्यागने पर ही इसका अंत होता है। जैसे काठ अपने से ही उत्पन्न आग से जल जाता है, वैसे मनुष्य अपने ही मन से उत्पन्न हुई तृष्णा में जलता है। धनी को वैसे ही राजा, जल, अग्नि, चोर तथा स्वजनों से भय रहता है, जैसे प्राणियों को मृत्यु से। धनवान को लोग वैसे ही सब तरफ से नोचते हैं, जैसे मांस के टुकड़े को आकाश में पक्षी, पृथ्वी पर हिंसकी जानवर और जल में मछलियां नोच खाती हैं। कितने मनुष्यों को उनका अर्थ ही उनके लिए अनर्थ का कारण बनता है। अर्थ द्वारा प्राप्त हुए सुख में फंसकर मनुष्य परम शांति नहीं पाता।

धन-प्राप्ति के सभी उपाय मन में मोह बढ़ाने वाले हैं। कंजूसी, घमंड, अभिमान, भय तथा उद्वेग धन से उत्पन्न दुख हैं। धन के उपार्जन, रक्षा तथा व्यय करने में दुख है। धन के कारण लोग एक दूसरे को मार डालते हैं। धन के त्यागने में दुख होता है और उसकी रक्षा करने में महान दुख होता है। धन की प्राप्ति दुख से होती है। अतएव धन का चिंतन न करे। धन का चिंतन करना अपना पतन करना है। मूर्ख सदा असंतुष्ट रहते हैं और ज्ञानी सदैव संतुष्ट। धन की तृष्णा कभी बुझने वाली नहीं है। संतोष से ही तृष्णा का नाश होता है। जवानी, सौंदर्य, जीवन, धन, ऐश्वर्य तथा प्रियजनों के सहवास अनित्य हैं। अतएव शांति-इच्छुक इनकी आशा न करे। धन-संग्रही मनुष्य को उपद्रव-रहित नहीं देखा जाता। विवेकवान उसी धन का उपयोग सही समझते हैं जो न्यायपूर्वक स्वत: प्राप्त हो।

धर्म करने के लिए धन की इच्छा करने की अपेक्षा उसकी इच्छा न करना अच्छा है। कीचड़ लगाकर धोने की अपेक्षा कीचड़ न लगाना अच्छा है। अतएव युधिष्ठिर! आपको धन की इच्छा छोड़कर शांतिदायी धर्म का आचरण करना चाहिए।

युधिष्ठिर ने कहा—मैं जो धन चाहता हूं वह अपने भोग के लिए नहीं, अपितु अपने और परिवार के निर्वाह के लिए, ज्ञानियों तथा अतिथियों की सेवा के लिए। गृहस्थ के भोजन में अतिथियों, मनुष्यों तथा अन्य प्राणियों का भाग देखा जाता है। गृहस्थ का कर्तव्य है कि वह साधु-संन्यासियों को भोजन दे। अतिथियों, संतों तथा आये हुए लोगों के लिए, आसन, जल, भोजन तथा मीठे वचन अवश्य देना चाहिए। आगंतुक को प्रेम से देखे, प्रेमभाव प्रकट करे, मीठे वचन बोले, उठकर उन्हें आसन दे। स्वजन तथा अतिथिजन का आदर और सेवा जिस घर में नहीं होती है, वह पतन की तरफ चला जाता है। गृहस्थ

प्रतिदिन 'विघस' और 'अमृत' भोजन करे। सब लोगों के भोजन कर लेने पर जो बच रह जाय वह 'विघस' है और बलिवैश्वदेव से बचे हुए अन्न का नाम 'अमृत' है। अतिथियों को नेत्र दे, मन दे और मधुरवाणी दे; अर्थात उन्हें प्रेम से देखे, मन से प्रेम करे तथा उनसे मीठी वाणी बोले। अतिथि जब तक घर पर रहे, उसके पास बैठे और उसके जाते समय कुछ दूर चलकर उसे विदा करे। यह पांच दक्षिणा युक्त अतिथि-यज्ञ है। जो गृहस्थ थके-मांदे अतिथि को प्रसन्नतापूर्वक भोजन-आसन देता है, वह महान पुण्य फल पाता है।

शौनक ने कहा—अहो! जगत के लोग उलटा चलते हैं। साधु पुरुष जिस कर्म को बुरा मानते हैं दुष्ट मनुष्य उसी को करने में प्रसन्न होते हैं। अज्ञानी मनुष्य पेट और भोग तक ही सीमित रहता है। समझदार मनुष्य भी मन-इंद्रियों के पतन की तरफ घसिट जाता है। मनुष्य मोह के वेग में पड़कर उसी प्रकार अपना विनाश करता है जिस प्रकार पतिंगे ज्योति-शिखा पर कूदकर प्राण दे देते हैं। मनुष्य आहार-विहार में मोहित होकर आत्मशांति से दूर रहता है। जीव अविद्या, कर्म और तृष्णा से बंधकर नाना योनियों में भटकता है। विवेकवान मोक्ष-पथ पर चलते हैं। वेद वचन हैं कि अभिमान त्यागकर कर्म करो। यज्ञ, अध्ययन, दान, तप, सत्य, क्षमा, मन और इंद्रियों का संयम तथा लोभ का त्याग, ये धर्म के आठ पथ हैं। इनमें पहले वाले चार पितृयान मार्ग के हैं और पीछे वाले चार देवयान मार्ग के हैं। "सम्यक संकल्प से, सम्यक इंद्रिय निग्रह से, सम्यक अहिंसा व्रत से, सम्यक गुरु सेवन से, सम्यक आहार एवं योग से, सम्यक शास्त्र अध्ययन से, सम्यक कर्मों के त्याग से और सम्यक चित्तनिरोध से मनुष्य परम शांति पाता है। संसार को जीतने की इच्छा वाले साधक इसी प्रकार राग-द्वेष से मुक्त होकर देवगति के ऐश्वर्य प्राप्त करते हैं।"

. **विघसो भुक्तशेषम् (मनुस्मृति)।**

. **कुत्तों-कौओं आदि जानवरों को दिया जाने वाला भोजन बलिवैश्वदेव है।**

. **सम्यक्संकल्पसम्बन्धात् सम्यक् चेन्द्रियनिग्रहात्।**
सम्यग्व्रतविशेषाच्च सम्यक् च गुरुसेवनात्
सम्यगाहारयोगाच्च सम्यक् चाध्ययनागमात्।
सम्यक्कर्मोपसंन्यासात् सम्यक् चित्तनिरोधनात्
एवं कर्माणि कुर्वन्ति संसारविजिगीषवः।
रागद्वेषविनिर्मुक्ता ऐश्वर्यं देवता गताः (वन पर्व)
बौद्धों के सम्यकदृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक वचन, सम्यक कर्मांत, सम्यक आजीव, सम्यक व्यायाम, सम्यक स्मृति और सम्यक समाधि से तुलनीय है।

युधिष्ठिर ने अपने पुरोहित धौम्य मुनि से कहा कि मेरे पास साधन न होने से मैं इन ब्राह्मणों का भरण-पोषण कैसे कर सकता हूं? धौम्य ने मनन-चिंतन करके बताया कि सूर्य अन्नदाता है। वही पृथ्वी से पानी खींचकर आकाश से बरसाता है और पृथ्वी पर अन्न, फलादि पैदा होते हैं, अतएव तुम उसकी उपासना करो, तो वह तुम्हें सब कुछ देगा। इसके बाद तेरह श्लोकों में सूर्य के एक सौ आठ नाम बताते हैं, और युधिष्ठिर गंगा में खड़े होकर उनके जप द्वारा सूर्य की उपासना करते हैं। फिर कहते हैं–हे अन्नपते सूर्यदेव! मैं श्रद्धापूर्वक अतिथियों की सेवा के लिए अन्न प्राप्त करना चाहता हूं। आप मुझे कृपया अन्न दें। इसके बाद सूर्यदेव आकर युधिष्ठिर को एक तांबा की बटलोई देते हैं और कहते हैं–इस बटलोई में फल, मूल, आमिष और शाक–*फलमूलामिषं शाकम्* (वन, ,) चारों प्रकार के भोजन जो पकाये जायेंगे, वे तब तक अक्षय बने रहेंगे जब तक द्रौपदी स्वयं भोजन न करके अन्य को परोसती रहेगी।

सूर्य बटलोई देकर अंतर्धान हो गये। इसके बाद बताया गया कि जो कोई भी संयम रखकर सूर्य भगवान के इस एक सौ आठ नामों का पाठ करके स्तुति एवं उपासना करेगा उसे अत्यंत दुर्लभ वर प्राप्त होंगे। वह पुत्र, धन, विद्या, पत्नी, पति, मुक्ति सब कुछ प्राप्त कर लेगा।

युधिष्ठिर इस बटलोई के प्रताप से ब्राह्मणों को भोजन कराते थे, फिर भाइयों को, उसके बाद 'विघस' भोजन स्वयं करते थे, तब द्रौपदी खाती थी।

इसके बाद युधिष्ठिर ब्रह्ममंडली तथा पुरोहित धौम्य मुनि के साथ काम्यक वन को चल दिये (अध्याय –)।

मीमांसा

तृष्णा-त्याग, अतिथि-सत्कार और सम्यक आचरण के उपदेश कल्याणकारी हैं। सूर्य की बटलोई बालकों को बहलाने की कहानी है। सूर्य आग का धधकता गोला जड़ लौ-पिंड है। उसके प्राकृतिक प्रभाव से पृथ्वी पर वर्षा तथा उत्पादन इत्यादि होते हैं तथा प्राणियों के व्यवहार संपन्न होते हैं, यह सब सच है; किंतु वह अचेतन जड़ है, अतएव वह न किसी की प्रार्थना सुन सकता है और न मांगने पर कुछ दे सकता है। परंतु पोथियों के इन भ्रामक कथनों को सच मानकर आज भी लोग सूर्य आदि जड़ वस्तुओं की उपासना करके ऋद्धि-सिद्धि पाना चाहते हैं जो केवल अज्ञान और भटकाव है। चाहे जैसी बटलोई हो, उसमें जितना भोज्य-पदार्थ पकेगा उतना ही उससे मिलेगा। उससे अधिक एक दाना भी नहीं बढ़ सकता। धर्म के नाम पर नाना मत के पुरोहितों ने घोर अज्ञान फैलाया है। पाठक सावधान!

. धृतराष्ट्र का विदुर पर क्रोध और पुनः उनसे क्षमा मांगना

धृतराष्ट्र ने विदुर को बुलाया और उनसे कहा कि तुम बुद्धिमान हो। तुम वह बात बताओ जो हमारे और पांडवों दोनों के लिए हितकर हो। ऐसा न हो कि पांडव हमें जड़ मूल से उखाड़ फेंकें। विदुर ने कहा–आप पांडवों को बुलाकर उनका राज्य उन्हें दे दीजिए और सभा में द्रौपदी से दुःशासन क्षमा मांग लें। यही दोनों पक्षों के सुख का रास्ता है। धृतराष्ट्र ने कहा–विदुर! तुमने जो यह बात कही है वह पांडवों के लिए तो हितकर है, परंतु मेरे पुत्रों के लिए हितकर नहीं है। लगता है कि तुम केवल पांडवों के हितैषी हो, मेरे नहीं। मैं पांडवों का हित करने के लिए अपने पुत्रों को कैसे छोड़ दूं? यह ठीक है कि पांडव भी मेरे पुत्र हैं, परंतु दुर्योधन तो मेरे शरीर से पैदा हुआ है। समता के लिए क्या अपने शरीर का भी त्याग किया जा सकता है? विदुर! मैं तुम्हारा सम्मान करता हूं, परंतु तुम मुझे कुटिल भाव से राय देते हो। अब तुम्हारी जैसी इच्छा हो वैसा करो। चाहे यहां से चले जाओ या रहो। तुमसे मुझे कोई सरोकार नहीं है। कुलटा स्त्री को चाहे जितना समझाओ, वह पति को त्याग ही देती है।

इधर पांडव कुरुक्षेत्र में पहुंचे। वे यमुना नदी से आगे बढ़कर एक वन से दूसरे वन चलते हुए पश्चिम दिशा को बढ़ते गये। फिर सरस्वती तट तथा मरुस्थल की यात्रा करते हुए काम्यकवन पहुंचे, जहां बहुत-से ऋषि-मुनि रहते थे। मुनियों ने पांडवों को सांत्वना दी। पांडव उसी वन में रहने लगे।

इधर विदुर जी तेज घोड़ों से जुते रथ पर बैठकर पांडवों का पता लगाते हुए काम्यकवन पहुंचे। भीम ने विदुर को आते देखकर कहा–ये विदुर हमारे पास आकर पता नहीं क्या करेंगे! ये शकुनि के भेजे हुए तो नहीं हैं कि हमें जुआ खेलने के लिए बुलाने आ रहे हों। ऐसा न हो कि शकुनि जुआ में हमारे अस्त्र-शस्त्रों को भी जीतना चाहते हों। निमंत्रण देने पर हम जुआ खेलने से पीछे नहीं हटेंगे, परंतु यदि हम गांडीव हार गये, तो हमें पुनः राज्य प्राप्ति नहीं हो सकेगी।

पांडवों ने विदुर की अगवानी की। उन्हें सत्कार से बैठाया। पांडवों के पूछने पर विदुर ने वह सब बातें कहीं जो धृतराष्ट्र के द्वारा हुई थीं।

इधर धृतराष्ट्र विदुर को जब सुने कि वे पांडव के पास चले गये हैं तब उनको बड़ा पश्चाताप हुआ। उनके मन में यह भी हुआ कि यदि विदुर पांडव के पक्ष में चले गये तो उन्हीं की उन्नति होगी। विदुर की याद करते-करते धृतराष्ट्र व्यामोहित हो गये। सभा द्वार पर आये और अन्य राजाओं के सामने अचेत

होकर गिर पड़े। फिर चेत में आकर संजय से बोले–संजय! मेरा बुद्धिमान भाई विदुर मुझे छोड़कर चला गया है। उसे जल्दी मेरे पास लाओ। मैं उसके बिना पीड़ित हूं। मैं पापी हूं। मैंने उसे क्रोध–वश निकाल दिया है। विदुर जीवित तो हैं न? मेरा भाई विदुर कभी कोई छोटा अपराध भी नहीं किया है। संजय! मैंने अपने प्यारे विदुर के प्रति बड़ा अपराध कर डाला। उसे जल्दी मेरे पास लाओ, नहीं तो मैं प्राण त्याग दूंगा। संजय गये। विदुर को काम्यक वन से बुलाकर लाये। धृतराष्ट्र ने विदुर को हृदय से लगाकर उनको अपनी गोद में ले लिया और उनका सिर सूंघा और कहा–विदुर! तुमसे जो मैंने अप्रिय बात कही थी उसके लिए मुझे क्षमा कर दो। विदुर ने कहा–राजन! मैंने तो उसी समय उसको अपने मन से उतार दिया था। उसके लिए आप कोई विचार न करें। अंततः विदुर और धृतराष्ट्र एक–दूसरे से विनम्र होकर अत्यंत प्रसन्न हो गये (अध्याय –)।

मीमांसा

मन का संदेह, उठा–पठक कितना चलता है, यह तो हर मनुष्य अपने मन में ही देख सकता है। सबके मन में निरंतर महाभारत चल रहा है। मनुष्य की मनुष्यता है भूल से बचना। यदि भूल हो जाय तो तुरंत उसे विनम्रतापूर्वक स्वीकार लेना और शुद्ध मन का हो जाना।

. दुर्योधन का असंतोष, वेदव्यास और मैत्रेय की सीख

धृतराष्ट्र का विदुर को अपने पास रख लेना जानकर दुर्योधन क्षुब्ध हो गया। उसने कर्ण और शकुनि को बुलाकर उनसे कहा–यह विदुर पुनः पिता जी के पास लौट आया है। यह पांडवों का पक्षपाती है। यह पिता जी को प्रभावित कर पांडवों को लौटा लाने के चक्कर में है। यह सबके पहले यह उपाय सोचो कि जिससे ऐसा न हो। यदि कहीं पांडव लौट आये तो मैं जल–भोजन छोड़कर शरीर त्याग दूंगा। मैं विष खा लूंगा, फांसी लगा लूंगा, पेट में छूरा भोंक लूंगा या अग्नि में जल मरूंगा, किंतु पांडवों का विकास पुनः नहीं देख पाऊंगा।

शकुनि ने कहा–राजन! तुम तो बच्चे सरीखी बातें करते हो। पांडव सत्य–प्रतिज्ञ हैं। वे तेरह वर्ष के पहले कदापि नहीं आ सकते। वे अपने सत्य के पालन के सामने तुम्हारे पिता की बात नहीं स्वीकारेंगे। यदि वे तुम्हारे पिता की

बात मानकर नगर में आ भी गये, तो हम उनके दोषों पर ध्यान रखेंगे। दुःशासन ने मामा शकुनि की बात का समर्थन किया। कर्ण ने कहा–दुर्योधन! हम लोग तुम्हारी कामना पूरी करने के लिए तैयार हैं। पांडव अपनी अवधि पूरी किये बिना नहीं आयेंगे। यदि वे मोह-वश आ गये, तो उन्हें जुए के खेल में फिर जीत लेना। परंतु इन थोथी बातों से दुर्योधन को संतोष होने वाला नहीं था। उसने इन लोगों से मुंह घुमा लिया।

कर्ण ने दुर्योधन का मंतव्य समझकर सबको उत्साहित करके कहा–हम सब कवच पहनें, अस्त्र-शस्त्र लें और रथ पर बैठें और चलकर पांडवों को वन में ही मार डालें। फिर न रहे बांस न बाजे बंसरी! दुर्योधन निष्कंटक राज्य करें। कर्ण की इन बातों को सुनकर सब प्रसन्न हो गये। और सजधज कर तथा रथ पर सवार होकर नगर से बाहर निकल पड़े। संयोग था कि इन सबके पितामह वेदव्यास आ पड़े। उन्होंने इन्हें ऐसा करने से रोका। फिर वेदव्यास ने धृतराष्ट्र को समझाया कि पांडव जो वन में भेज दिये गये हैं वह मुझे अच्छा नहीं लगा। पांडवों के साथ छल किया गया है। भाई-बंधु से कलह करके कोई सुखी नहीं रह सकता। मेरी बातें यदि तुम्हारा पुत्र दुर्योधन माने तो वह अकेला पांडवों के पास जाय और उनकी सेवा करे। फलतः दोनों में प्रेम उत्पन्न हो जाय। तो तुम आज ही सुखी हो जाओगे। किंतु राजन! किसी का जन्मजात स्वभाव दूर नहीं होगा। भीष्म आदि से मिलकर तुम लोग विचार करो और दुर्योधन को सम्हालो।

धृतराष्ट्र ने कहा–भगवन! जुआ-खेलना मुझे तथा भीष्म, विदुर, गांधारी किसी को पसंद नहीं था, किंतु मैंने मोह-वश इस गलत काम को होने दिया। दुर्योधन अविवेकी है, तो भी पुत्र-स्नेह-वश मैं उसका त्याग नहीं कर सकता। वेदव्यास ने कहा–एक गाय एक निर्बल बैल को किसान द्वारा पिटते देखकर रोने लगी। इंद्र ने कहा–गाय! तेरे तो सभी बैल बच्चे हैं। इसी के लिए क्यों रोती है? गाय ने मानो कहा कि यह दुर्बल है इसलिए रोती हूं। तो राजन! मैं पांडवों की दयनीय दशा को देखकर दुखी हूं। धृतराष्ट्र! तुम अपने पुत्र दुर्योधन को समझाकर रास्ते पर लाओ। धृतराष्ट्र ने कहा–भगवन! आप सौभाग्य से आये ही हैं और हम लोगों पर आपका अनुग्रह भी है तो अपने इस दुर्बुद्धि पौत्र दुर्योधन को आप स्वयं समझा दीजिए।

वेदव्यास अपनी जान बचाकर भाग निकलने का उपाय सोच लिए; क्योंकि उसी समय ऋषि मैत्रेय आ गये। वेदव्यास ने कहा–देखो, ये मैत्रेय जी तुम्हारे पुत्र को समझायेंगे, मैं तो अब चला। मैत्रेय ने धृतराष्ट्र से कहा–तुम्हारे और

भीष्म के रहते हुए तुम्हारे पुत्रों में कलह हो, यह उचित नहीं है। आप इन्हें बांधकर नियंत्रित करें। मैत्रेय ने दुर्योधन की तरफ मुड़कर कहा–राजन! तुम पांडवों से वैर न करो। आपस में प्रेम से रहो। दुर्योधन मुस्करा कर मैत्रेय की उपेक्षा कर रहा था। वह पैर से पृथ्वी कुरेद रहा था ओर अपनी जांघ ठोंक रहा था। मैत्रेय ने दुर्योधन की उद्दंडता देखकर कहा कि तुम्हारा विनाश निकट है, और वे धृतराष्ट्र से यह कहकर चल दिये कि तुम्हारा पुत्र मेरी बात सुनना नहीं चाहता है।

इसके बाद विदुर ने एक घटना सुनायी कि जब पांडव तीन दिन और तीन रात के बाद काम्यक वन पहुंचे तो कर्मवीर नामक राक्षस से भीम की मुठभेड़ हो गयी। कर्मवीर ऐसा भीमकाय और बलवान था कि उसके चलने से वन में आंधी जैसी आ जाती थी। भीम ने एक पचास फुट लंबा पेड़ उखाड़कर उसके ऊपर दे मारा। फिर पकड़कर रगड़ मारा। कर्मवीर मर गया (अध्याय –)

मीमांसा

कैसा संसार है! वेदव्यास जैसे महामना अपने पौत्र युधिष्ठिर को न विनाशकारी जुआ से रोक पाये और न दुर्योधन को द्रोह से रोक पाये। कर्मवीर राक्षस की गल्प-कथा भीम की बहादुरी बखान करने के लिए कवि ले आया है। जैसे नाच-नाटक में जोकर आता है, वैसे महाकाव्यों में ऐसे गल्प आते हैं और ये घोर काल्पनिक होते हैं।

. श्रीकृष्ण का सर्वेश्वरत्व, द्रौपदी का मनस्ताप और उसे संतोष देना

भोज, वृष्णि और अंधक वंश के यादवों ने सुना कि पांडव जुआ में सब हार कर वनवास कर रहे हैं, इनके साथ पांचाल कुमार धृष्टद्युम्न, चेदिराज धृष्टकेतु तथा केकय राजकुमार भी इस दुखद घटना को सुने, तो ये सब वन में पांडव से मिलने गये और सभी क्षत्रिय कहने लगे कि हमें क्या करना चाहिए? श्रीकृष्ण ने कुपित होकर कहा–दुर्योधन, कर्ण, शकुनि और दुःशासन के रक्त की पृथ्वी प्यासी है। जो दूसरे के साथ छल-कपट करके राज कर रहा है, उसे मरना है। युधिष्ठिर पुनः चक्रवर्ती बनेंगे। ऐसा कहते-कहते श्रीकृष्ण अत्यंत कुपित हो गये और लगा कि वे सारे संसार को भस्म कर देंगे। तब अर्जुन उन्हें शांत कर उनका गुण-गान करने लगे–

श्रीकृष्ण साक्षात विष्णु हैं। हे कृष्ण! आपने पूर्व काल में गंधमादन पर्वत पर 'यत्रसायंगृह' मुनि के रूप में दस हजार वर्ष तक विचरण किया; अर्थात जहां सायंकाल हुआ वहीं रहकर नित्य विचरते रहे। आप नारायण ऋषि के रूप में विचरते रहे। आपने पूर्वकाल में ग्यारह हजार वर्ष तक केवल जल पीकर पुष्कर तीर्थ में निवास किया। आप विशालपुरी के बदरी आश्रम में दोनों हाथ ऊपर उठाये केवल वायु पीकर एक पैर से सौ वर्ष खड़े रहे। आप सरस्वती नदी के तट पर उत्तरीय वस्त्र को भी त्यागकर बारह वर्ष के यज्ञ के समय अत्यंत दुर्बल हो गये थे। उस समय आपके शरीर की नस-नाड़ियां साफ दिखायी देती थीं। आप प्रभास तीर्थ में लोगों के तप करने में उत्साहित करने के लिए शौच-संतोष नियमों से रहते हुए एक सहस्र दिव्य वर्ष तक एक पैर से खड़े रहे। आप सबके अधिष्ठान सनातन पुरुष हैं। आप ही ने समस्त दैत्यों और दानवों को मारा। आप ही ने इंद्र को सर्वेश्वर पद दिया। आप पहले नारायण होकर पुनः हरिरूप में प्रकट हुए। ब्रह्मा, सोम, सूर्य, धर्म, धाता, यम, अनल, वायु, कुबेर, रुद्र, काल, आकाश, पृथ्वी, दिशाएं, चराचर-गुरु और अजन्मा आप ही हैं। आप चैत्ररथ वन में अनेक यज्ञ किये और उसमें प्रत्येक यज्ञ में एक-एक करोड़ स्वर्ण मुद्राओं का दान किया। आप अदिति के पुत्र इंद्र के छोटे भाई सर्वव्यापी विष्णु रूप में प्रसिद्ध हैं। आप ही ने वामन बनकर तीनों लोकों को अपने पग से नाप लिया था। आप ही अपने तेज से सूर्य को प्रकाशित करते हैं। आपने हजारों अवतार लेकर असुरों को मारा है। आप ही ने रूक्मी को जीतकर रुक्मिणी को उठा लाया और अपनी पत्नी बनाया। आप ही संसार का प्रलय कर सारा संसार अपने में लीन कर लेते हैं और समय से आप ही की नाभिकमल से ब्रह्मा उत्पन्न होते हैं जिनका रचा हुआ पूरा संसार है। आपने बचपन में ही जो महान कार्य किये हैं, उन्हें न पूर्ववर्ती कर सके न परवर्ती। आप ब्राह्मणों के साथ कुछ समय कैलाश पर्वत पर भी रहे हैं। वस्तुतः आप में न क्रोध है, न ईर्ष्या है, न असत्य है, न निर्दयता है। फिर आप में कठोरता कहां से आयेगी?

श्रीकृष्ण ने कहा–अर्जुन! तुम मेरे में हो और मैं तुम्हारे में हूं। जो मेरे हैं वे तुम्हारे हैं। जो तुमसे द्वेष रखता है वह मुझसे द्वेष रखता है। जो तुम्हारे अनुकूल है, वह मेरे अनुकूल है। तुम नर हो और मैं नारायण हूं। इस समय हम दोनों नर-नारायण ऋषि ही संसार में आये हैं। हम और तुम अभिन्न हैं। हम दोनों का भेद जाना नहीं जा सकता।

इसके बाद द्रौपदी ने भी श्रीकृष्ण के ईश्वरत्व और सर्वशक्तित्व का लंबा वर्णन किया है। फिर अपने दुख को रोया है कि भरी सभा में मुझ रजस्वला को

जिस तरह दुःशासन द्वारा घसीटा गया है वह अत्यंत बीभत्स रहा। इन पांडवों के बल को धिक्कार है जो ये केवल टुकुर-टुकुर ताकते रहे, और कुछ न कर सके। इसके बाद बहुत लंबे रूप में द्रौपदी ने अपना दुखड़ा रोया है। अंततः रोते हुए कहा–श्रीकृष्ण! मेरे लिए न पति है, न पुत्र है, न बांधव है, न भाई है, न पिता है और न आप ही हैं, क्योंकि नीचों द्वारा मेरा अपमान देखकर आप कुछ नहीं कर रहे हैं। वस्तुतः आप लोगों के मन में इसको लेकर कुछ दुख है ही नहीं। उस समय कर्ण ने मेरी जो हंसी उड़ायी थी, उससे मेरा हृदय आज भी जलता है। कृष्ण! चार कारणों से आपको मेरी रक्षा करना चाहिए; पहली बात, आप मेरे संबंधी हैं, दूसरी बात, मैं अग्निकुंड से पैदा होने के कारण गौरवपूर्ण हूं, तीसरी बात, मैं आपकी सच्ची सखी हूं, और चौथी बात, आप मेरी रक्षा करने में समर्थ हैं।

श्रीकृष्ण ने कहा–तुम जिन पर क्रुद्ध हो उनकी स्त्रियां भी अपने प्राणप्रिय पतियों के वियोग में रोयेंगी। पांडव के हित में जो कुछ संभव है, मैं करूंगा, शोक मत करो। मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूं कि तुम राजरानी बनोगी। आसमान फट जाय, हिमालय पर्वत ध्वस्त हो जाय, पृथ्वी के टुकड़े हो जायं और समुद्र सूख जाय, किंतु मेरी बात नहीं टल सकती। द्रौपदी ने इतना सुनकर तिरछी चितवन से अर्जुन की ओर देखा, तो उन्होंने भी द्रौपदी से कहा–मधुसूदन जो कह रहे हैं होकर रहेगा, टल नहीं सकता। धृष्टद्युम्न ने कहा–मैं द्रोण को मारूंगा, शिखंडी भीष्म को, भीम दुर्योधन को और अर्जुन कर्ण को मारेंगे। इंद्र भी हमें परास्त नहीं कर सकता, फिर धृतराष्ट्र के पुत्रों में क्या रखा है!

यह वन पर्व का बारहवां अध्याय है और इसमें एक सौ छत्तीस (   ) श्लोक हैं।

मीमांसा

द्रौपदी का उलाहना देना, रोना तथा दुखी होना तथा श्रीकृष्ण, अर्जुन और धृष्टद्युम्न का विरोधियों को मारने की प्रतिज्ञा करना सामान्य मनुष्यों के हृदय के मनोविकारों का प्रकटीकरण है जो ऐसी कलह भरी स्थिति के अनुकूल है। द्रौपदी से लेखक ने यह भी कहलवा दिया है कि मैं अग्निकुंड से पैदा हुई हूं, क्योंकि पंडितों ने उनके जन्म के समय ऐसा लिखा है। अग्निकुंड से ताप निकलता है, बच्चा या बच्ची नहीं पैदा होते।

रहा, अर्जुन और द्रौपदी द्वारा श्रीकृष्ण को सर्वशक्तिमान ईश्वर रूप में रख कर उनका अतिशयोक्तिपूर्ण गुण गाना, यह पांचरात्र भागवतों द्वारा मिलायी गयी सामग्री है। भारत विशेषज्ञ वासुदेवशरण अग्रवाल इस स्थान पर लिखते हैं–

"कृष्ण के पराक्रमों की सूची यहां, और दो बार उद्योग पर्व में आयी है। वहां एक बार तो विदुर ने ही दुर्योधन से और दूसरी बार संजय ने अर्जुन के शब्दों को उद्धृत करते हुए उसका उल्लेख किया है। अर्जुन के कहे हुए दोनों वर्णन पांचरात्र भागवतों के प्रभाव के अंतर्गत निर्मित हुए। इनमें नर-नारायण का एक साथ उल्लेख है और स्पष्ट रूप से कृष्ण को विष्णु का अवतार और विराट रूप कहा गया है।"

श्रीकृष्ण की तपस्या अत्यंत अतिशयोक्तिपूर्ण लिखी गयी है। लेखक पंडितों को यह ख्याल ही नहीं था कि हम समाज को क्या दे रहे हैं। इन्हें विश्वनियम और विवेक से कोई प्रयोजन नहीं था। इसी महाभारत में श्रीकृष्ण की संपूर्ण आयु एक सौ बीस ( ) वर्ष मानी गयी है जो विश्व-नियम के अनुकूल है, फिर वे हजारों वर्ष तप कैसे करते रहे? महाकाव्यों और पुराणों के भगवान किसी को सुधार नहीं पाते हैं, वे केवल मार-मार कर जनकल्याण करने की सूझ रखते हैं जो कल्याण के विपरीत है।

. जुआ के समय हस्तिनापुर में श्रीकृष्ण के अनुपस्थित होने का कारण

श्रीकृष्ण ने कहा—यदि मैं द्वारका या उसके निकट होता तो जुआ खेल न होने देता। यदि धृतराष्ट्र मुझे न बुलाते तो भी जान लेने पर मैं हस्तिनापुर पहुंच जाता और सबको समझाता कि जुआ अनर्थों की जड़ है। यदि लोग मेरे मीठे वचनों की सीख न मानते तो मैं उन्हें बलपूर्वक रोक देता। यदि लोग अन्याय पूर्वक धृतराष्ट्र का साथ देते तो मैं उन्हें मार डालता। वस्तुतः मैं उन दिनों आनर्त देश (सौराष्ट्र) में नहीं था। जब मैं आनर्तपुरी अर्थात द्वारका में आया, तब सात्यकि से सुना कि युधिष्ठिर सब कुछ हारकर बारह वर्ष वनवास में हैं। यह सुनते ही मेरा मन बेचैन हो गया और आप लोगों से मिलने आ गया। अहो, आप बड़े दुख में पड़ गये हैं।

युधिष्ठिर ने पूछा—आप उस समय कहां थे? श्रीकृष्ण ने कहा—जब आपके राजसूय यज्ञ में मैंने शिशुपाल को मारा था, तो उसकी मृत्यु-घटना को सुनकर शाल्व प्रचंड क्रोध में भर गया। मैं तो हस्तिनापुर में था, शाल्व ने द्वारका पर

. **भारत सावित्री, पृष्ठ** ।

चढ़ाई कर दी। शाल्व के पास सौभ नामक विमान था जो सदैव आकाश में रहता था। वह वहीं से यादवों पर बाणों की वर्षा करता था। उसने यादवों की बड़ी हत्या की। उसने यादवों के बड़े समूह की हत्या कर बगीचों को उजाड़ दिया। उसने यादवों से पूछा–वह वृष्णिकुल का कलंक मूढ़ात्मा वसुदेव-पुत्र वासुदेव कृष्ण कहां है? उसे युद्ध की बड़ी इच्छा रहती है। आज मैं उसके घमंड को चूर-चूर करूंगा। कृष्ण जहां होगा मैं वहीं जाऊंगा। मैं अपने शस्त्र को छूकर सौगंध खाता हूं, कृष्ण को मारे बिना मैं नहीं रहूंगा। शाल्व मेरे साथ युद्ध करने की इच्छा से चारों तरफ दौड़ता था कि कृष्ण कहां है, वह कहां है? आज मैं उस नीच पापाचारी कृष्ण को मार गिराऊंगा। शिशुपाल को उसने मारा है। मैं उसका बदला लूंगा। शिशुपाल अभी कम उम्र का था, वह राजा था, वह युद्ध के लिए तैयार नहीं था, असावधान था, ऐसी अवस्था में कृष्ण ने उसकी हत्या की है, अतः मैं उसे मारूंगा।

आगे श्रीकृष्ण ने कहा–युधिष्ठिर! जब मैं आपके राजसूय यज्ञ से लौटकर द्वारका पहुंचा तो वहां यह सब सुन और देखकर मेरा मन भी क्रोध में भर गया। उसने जो आनर्त देश (सौराष्ट्र) में संहार मचाया था, मुझ पर आक्षेप किया था, उसका बदला लेने के लिए मैं उसके देश में जा पहुंचा और उसकी खोज करने लगा, तो वह समुद्र के एक द्वीप में दिखायी दिया। मैंने अपना पांचजन्य शंख बजाकर उसे युद्ध के लिए निमंत्रित किया और मैं युद्ध में उससे भिड़ गया। सौभ नगर के लोगों से मेरा दो घड़ी युद्ध हुआ और मैंने सबको मार गिराया। इसी कार्य में उलझ जाने के कारण मैं द्वारका में उपस्थित नहीं था। जब द्वारका आया और आपकी विपत्ति सुनी तो भागा-भागा वन में आपके पास आ गया। जब बांध टूट गया, तब जल-प्रवाह कोई नहीं रोक सकता। आज सब कुछ बिगड़ चुका है, तब मैं क्या कर सकूंगा? इसके बाद श्रीकृष्ण विदा लेकर द्वारका चले गये (अध्याय   )।

मीमांसा

श्रीकृष्ण महाराज हर जगह विपक्षी को मार देना समस्या-समाधान की दवाई समझते हैं। इसी दृष्टिकोण से यहां यह भी कहते हैं कि मेरे बलपूर्वक रोकने पर यदि जुआ न रुकता, तो मैं जुआ खेलने वालों को मार डालता। इस मारामारी के चक्कर में ही महाभारत युद्ध हुआ, और उसके छत्तीस वर्ष बाद यादव-वंश आपस में मारामारी करके नष्ट हो गया। वस्तुतः समझौता करके अहिंसा के पथ पर चलकर स्थायी शांति मिलती है।

इसके बाद युधिष्ठिर कहते हैं कि महाबाहो! आपने जो सौभनरेश शाल्व से युद्ध किया उसको विस्तारपूर्वक कहिए। मैं उस प्रसंग को सुनते-सुनते तृप्त नहीं हो रहा हूं। वस्तुत: श्रीकृष्ण महाराज के मुख से यहां कुल इक्कीस ( ) श्लोकों में शाल्व पर कोप और युद्ध की चर्चा की गयी है। किंतु किसी लेखक पंडित को इसको बड़े तामझाम से लिखने की इच्छा हुई, तो उसने युधिष्ठिर से विस्तार से सुनने की जिज्ञासा प्रकट करवाकर आठ अध्यायों और दो सौ पचपन ( ) श्लोकों में युद्ध का वर्णन कर डाला।

इस क्रम में पहले द्वारका नगर की सुरक्षा का बड़ा अच्छा चित्र खींचा है, फिर युद्ध का विस्तार से वर्णन किया है जिसमें अनेक यादव हताहत हुए हैं। श्रीकृष्ण का रुक्मिणी से उत्पन्न प्यारा पुत्र प्रद्युम्न काफी चोट खाया है और श्रीकृष्ण को शाल्व ने युद्ध में व्यामोहित तथा मूर्च्छित कर दिया है। श्रीकृष्ण ने स्वयं कहा–*मां मोह आविशत्* (वन० ,)। अर्थात शाल्व की मार से मुझे मूर्च्छा आ गयी। अंतत: श्रीकृष्ण ने शाल्व को मार गिराया और उसका विमान नष्ट कर दिया (अध्याय -)।

मीमांसा

आकाशचारी विमान तो कल्पना की वस्तु है। विमान बनने के पहले विज्ञान का क्रमिक विकास चाहिए। जब इतना उन्नत विमान बन जायेगा तब उसकी तकनीक से सैकड़ों-हजारों विमान बनेंगे, केवल एक नहीं।

ध्यान रहे, जहां कहीं भी आता है कि जरा इस कथा को विस्तार से सुनाइये, वहां उस पूर्व में कही हुई कथा को नया लेखक-पंडित विस्तार से लिखकर उसमें जोड़ना चाहा है। यहां भी आठ अध्याय नयी जोड़ का परिणाम है।

. मार्कण्डेय और बक के उत्तम उपदेश

इसके बाद द्रौपदी सहित पांडव आगे द्वैतवन में चले गये जहां स्वच्छ जल का सरोवर था तथा अधिक पशु, पक्षी तथा कंद, मूल, फल आदि उपलब्ध थे। यहां सरस्वती नदी बहती थी तथा शालवन का विस्तार था। यहां पर पांडव आश्रम बनाकर रहने लगे। साथ में पुरोहित धौम्य मुनि रहते थे, वे पांडवों को सम्मति देते थे। एक दिन पांडवों के आश्रम पर मार्कण्डेय ऋषि आये। वे पांडवों तथा द्रौपदी को देखकर मुस्कराने लगे। युधिष्ठिर ने उदासीन होकर पूछा–महाराज! मेरी दुखद दशा देखकर अन्य तपस्वी दुख प्रकट करते हैं,

किंतु आप मुझे देखकर क्यों प्रसन्नतापूर्वक मुस्कराते हैं? मार्कण्डेय ने कहा–मैं न हर्षित होता हूं और न मुस्कराता हूं। हर्षजनित अभिमान मुझे कभी छूता तक नहीं। तुम्हारी विपत्ति देखकर मुझे श्रीरामचंद्र की याद आ गयी। वे सब प्रकार योग्य होकर भी पिता की आज्ञा से केवल धनुष–बाण लेकर लक्ष्मण के साथ वन में विचरते थे। मैंने उन्हें ऋष्यमूक पर्वत पर देखा था। श्रीराम इंद्र के समान प्रभावशाली थे। वे युद्ध में अजेय तथा बड़े अनुभवयुक्त थे। परंतु उन्होंने भी भोगों का त्यागकर वन में निवास किया था। इसलिए अपने को बलवान मानकर अधर्म नहीं करना चाहिए। सारा संसार कर्म विधान में चल रहा है। सबको अपने–अपने कर्मों का फल–भोग मिलता है। इसलिए अपने को बलवान मानकर अधर्म नहीं करना चाहिए। छह श्लोकों के अंत–अंत में मार्कण्डेय ने कहा है–*नेशे बलस्येति चरेदधर्मम्*–अपने को बल का स्वामी मानकर अधर्म न करे। अंत में मार्कण्डेय पांडवों को आशीर्वाद देकर और यह कहकर कि वनवास की अवधि पूरी करने के बाद तुम लोग अपना राज्य प्राप्त कर लोगे, पांडवों से विदा लेकर उत्तर दिशा को चल दिये।

इसके बाद छब्बीसवें अध्याय में दल्भ के पुत्र बक युधिष्ठिर को ब्राह्मणों का महत्त्व बताते हैं। जहां युधिष्ठिर रहते थे, बहुत–से ब्राह्मण रहते थे। वहां नित्य हवन, वेदध्वनि तथा ज्ञानचर्चा होती थी। युधिष्ठिर के साथ भार्गव, आंगिरस, वासिष्ठ, काश्यप, अगस्त्य वंशी, आत्रेय आदि वर्ग के ब्राह्मण विद्यमान थे। बक ने कहा–जिसे धर्म और अर्थ की शिक्षा मिली हो और जो मोह से दूर है, ऐसे ब्राह्मण को लेकर रहने वाले राजा की सब समय विजय है। ब्राह्मणों का सहयोग पाये बिना क्षत्रियों का राज्य अधिक दिन तक नहीं टिक सकता। संग्राम में हाथी से महावत को अलग कर देने पर अनर्थ ही है, इसी प्रकार ब्राह्मण रहित क्षत्रिय **वज्रहीन** हो जाता है। ब्राह्मणों के पास विचार शक्ति है और क्षत्रियों के पास शासन बल है। ये दोनों जब एक साथ होते हैं तब प्रजा सुखी होती है (अध्याय –)।

मीमांसा

मार्कण्डेय ने श्रीराम को देखा था और पांडवों से भी मिले। लेखक लोग प्रसिद्ध ऋषियों को सब समय में घसीट कर ला पटकते हैं। चलो, मार्कण्डेय का उपदेश उत्तम है–*नेशे बलस्येति चरेदधर्मम्*–अपने को बली मानकर अधर्म का आचरण न करे। सारा बल क्षणिक है और अधर्माचरण का परिणाम दुखजनक।

शासक क्षत्रिय हैं, विद्वान ब्राह्मण हैं। आजकल नेता क्षत्रिय हैं और आई.ए.एस. अफसर ब्राह्मण हैं। उनके बिना नेता राज्य नहीं चला सकते। बात आयी है कि जो अर्थ और धर्म का ज्ञाता हो और मोह-रहित हो वह ब्राह्मण मंत्री बनाने योग्य है। यहां मोह-रहित का अर्थ वैराग्यवान होना नहीं है, अपितु पक्षपात-रहित, लोभ-रहित होना है। इसके साथ है कि उसके पास विचार-शक्ति हो। अतएव अर्थ-धर्मज्ञाता तथा निष्पक्ष, निर्लोभ और विवेक संपन्न व्यक्ति ब्राह्मण है और वह मंत्री बनाने योग्य है।

. द्रौपदी और युधिष्ठिर के क्रोध और क्षमा पर विचार

द्रौपदी ने युधिष्ठिर से कहा–राजन! दुर्योधन को हम लोगों की दयनीय दशा से कोई दुख नहीं होगा। जब आप मृगचर्म धारणकर वन के लिए निकले तब सब रो दिये, किंतु दुर्योधन, कर्ण, दुःशासन तथा शकुनि की आंखें गीली नहीं हुईं। आज आपकी वन में कुशघास की शय्या देखकर मुझे राजभवन की आपकी शय्या की याद आ जाती है, तब मैं दुख से व्यथित हो जाती हूं। सभाभवन का रत्नजटित हाथी दांत का सिंहासन याद कर आज आपको पृथ्वी पर बैठे देखकर दिल दो टूक हो जाता है। इंद्रप्रस्थ के सभाभवन में आपको राजाओं से घिरे बैठे देखी हूं। आज आपकी कैसी दयनीय दशा है? कहां आपका चंदन चर्चित अंग, कहां आज धूल में लिपटा, कहां उज्ज्वल रेशमी वस्त्र, कहां आज मृगचर्म, कहां आपके राजभवन में सोने की थालियों में हजारों ब्राह्मणों, यतियों, ब्रह्मचारियों तथा सामान्यों का निरंतर भोजन कराना, कहां आज का वनवास? आपको दुर्योधन पर क्रोध नहीं जगता? ये भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव क्या दुख भोगने के योग्य हैं? क्या द्रुपदपुत्री, आपकी पत्नी, कृष्ण की सखी, पांडु की पुत्रवधू द्रौपदी दुख भोगने योग्य है? आपको क्रोध क्यों नहीं जगता?

संसार में क्षत्रिय क्रोध-रहित नहीं होता। क्षत्रिय शब्द की व्युत्पत्ति ही ऐसी है जिससे उसका क्रोध होना सूचित करता है (*क्षरते इति क्षत्रम्* –जो दुष्टों का क्षरण-नाश करता है, वह क्षत्रिय है)। आप तो इसके उलटे हैं। एक बार बलि ने अपने पितामह प्रह्लाद से पूछा था कि क्षमा और तेज में कौन श्रेष्ठ है? प्रह्लाद ने बताया था कि न सदा क्षमा ठीक है न तेज।

सदा क्षमा करने वाले के नौकर, शत्रु तथा उदासीन सभी उसका तिरस्कार करते हैं। सदा क्षमा करने वाले के धन को नौकर हड़प लेते हैं। सदा क्षमा

करने वाले स्वामी के वाहन, वस्त्र, अलंकार, शय्या, आसन, भोजन, धन, सेवक अपने उपयोग में लेने लगते हैं। वे अपने क्षमाशील स्वामी को कटुवचन भी सुनाया करते हैं। यहां तक कि उनकी स्त्रियों तक को अपना बना लेना चाहते हैं। अत्यंत क्षमाशील की स्त्रियां उद्दंड एवं स्वेच्छाचारिणी हो जाती हैं।

क्षमा न करने वाला क्रोधी मनुष्य सबको दुख देता है। तेज एवं उत्तेजना वाला मनुष्य मित्रों, स्वजनों तथा साधारण लोगों को दुख देता है और उनसे स्वयं घृणा का पात्र बन जाता है। जो स्वयं उद्वेगित रहता है और दूसरों को उद्वेग पहुंचाता है, वह सबका घृणा–पात्र बन जाता है। उत्तेजक मनुष्य से लोग वैसे उद्विग्न होते हैं जैसे घर में रहने वाले सांप से।

अतएव न सदैव उत्तेजक रहे और न सदैव कोमल। अवसर देखकर उत्तेजना और कोमलता का बरताव करे। अब मैं आपको क्षमा के योग्य अवसर बताती हूं। जिसने आपका भारी उपकार किया है, उसके बड़े अपराध को भी क्षमा कर दे। किसी द्वारा अनजान में किया गया अपराध क्षमा के योग्य है। किंतु जो अपराध करके उसे न स्वीकारता हो, उसे अवश्य दंड देना चाहिए। किसी का पहला अपराध क्षमा करना चाहिए यदि वह सुधरना चाहता है तो। यदि वह पुनः अपराध करता है तो दंडनीय है। कोमलता कठोरता पर विजय करती है। कोमलता से कुछ असाध्य नहीं है। अतएव कोमलता उच्चतम गुण है।

प्रह्लाद का उदाहरण देकर द्रौपदी कहती है, किंतु धृतराष्ट्र के पुत्र लोभी हैं आपके अपकारी हैं, अतएव उन पर तो आपको क्रोध ही करना चाहिए। सब अवसर पर बहुत कोमल रहने वाले की सब अवहेलना करते हैं और हर क्षण तीक्ष्ण स्वभाव वाले से सबको उद्वेग प्राप्त होता है। इसलिए इनका प्रयोग उचित अवसर पर ठीक है।

युधिष्ठिर ने कहा–द्रौपदी! क्रोध पतन का द्वार है और यदि क्रोध जीत लिया जाय तो उत्थान है। क्रोध को जीतने वाला सुखी होता है और जो क्रोध के वश रहता है वह अपना विनाश करता है। क्रोधी पाप करता है। क्रोध–वश मनुष्य गुरुजनों का भी तिरस्कार करता है। क्रोधी मनुष्य श्रेष्ठ पुरुषों का भी अपमान करता है। क्रोधी मनुष्य यह नहीं समझ पाता कि क्या कहना चाहिए और क्या नहीं। क्रोधी मनुष्य के लिए कुछ अवाच्य और अकाज्य नहीं है। क्रोधी मनुष्य आत्महत्या तक कर लेता है।

धीर पुरुष क्रोध को जीत लेता है। सारे अनर्थों की जड़ क्रोध को विवेकवान कैसे धारण कर सकता है? क्रोधी के प्रति भी जो क्रोध नहीं करता

वह अपने को और उसे, दोनों को दुख से बचा लेता है। वह अपने और दूसरे के दोषों तथा दुखों को दूर करने वाला चिकित्सक बन जाता है। यदि बलवान से कष्ट पाकर निर्बल उस पर क्रोध करता है तो अपना ही नाश करता है। अतएव असमर्थ को अपना क्रोध जीतना ही कल्याणकर है। जो बलवान होकर भी क्रोध करने वाले पर क्रोध नहीं करता है, वह अपने और दूसरे का भी कल्याण करता है। इसलिए निर्बल तथा बलवान सबको क्षमाशील होना चाहिए।

क्षमाशील संत पुरुष की सदा जय होती है। असत्य से सत्य श्रेष्ठ है, क्रोध से क्षमा श्रेष्ठ है। क्रूरता से दयालुता श्रेष्ठ है। तेजस्वी में क्रोध नहीं होता। जो मन में उत्पन्न हुए क्रोध को दबा देता है, वह तेजस्वी है। क्रोधी मनुष्य मर्यादा को नहीं समझ पाता है। वह कहने और न कहने योग्य तथा करने और न करने योग्य का विचार नहीं कर पाता। क्रोधी मनुष्य अवध्य का वध करता है, गुरुजनों को भी कटु कहता है। इसलिए तेजवान अपने से क्रोध को दूर रखे।

दक्षता, अमर्ष, शौर्य और शीघ्रता तेज के गुण हैं। जो मनुष्य क्रोध से पीड़ित है, वह उच्च गुणों में नहीं ठहर सकता। जो क्रोध को त्याग देता है वह तेजवान हो जाता है। मूर्ख लोग क्रोध को तेज मानते हैं। परंतु क्रोध विनाश का कारण है। अतएव क्रोध का त्याग करे। वर्णधर्म का पालन न कर सके तो कोई हानि नहीं है, किंतु क्रोध करने वाला अपनी महान हानि करता है। मूर्ख मनुष्य क्षमाशील नहीं होते, तो क्या सज्जन भी क्षमाशील न हो? यदि मनुष्यों में पृथ्वी के समान क्षमाशील व्यक्ति न हो, तो कभी संधि एवं मेल-मिलाप हो ही नहीं सकता। झगड़े की जड़ तो क्रोध ही है। यदि कोई हमें सतावे तो हम भी उसे सतावें, यदि गुरुजन हमें चांटे मारें तो हम भी उनको चांटे मारें, क्या यही मनुष्यता है? यदि सभी मनुष्य क्रोध के वश हो जायं तो एक के गाली देने पर दूसरा उसे गाली देगा। मार खाने पर दूसरे को मारेगा। हानि करने वाले की हानि करेगा। पिता पुत्र को मारे और पुत्र पिता को, पति पत्नियों को मारें और पत्नियां पतियों को। इस प्रकार क्रोध का शिकार हो जाने पर तो कहीं शांति नहीं मिल सकती। सबकी शांति का मूल संधि है, मेलमिलाप है। हे द्रौपदी! यदि तुम्हारे कथनानुसार राजा क्रोधी हो जाय, तो सारी प्रजा का नाश रखा-रखाया है।

इस जगत में जो पृथ्वी के समान अचल, सहनशील और क्षमाशील होते हैं, उन्हीं के प्रताप से संसार में शांति है। सभी दशाओं में क्षमा भाव रखना चाहिए। क्षमाशीलों से ही जगत में शांति प्रतिष्ठित है। क्रोध को जीतने वाला तथा क्षमा का आचरण करने वाला ही विद्वान और श्रेष्ठ है। वही प्रभावशाली है, वही उच्च शांति की स्थिति पाता है। क्रोधी मनुष्य अंधकार में रहता है। क्षमावान

महात्मा काश्यप ने गाथा कही है–क्षमा धर्म है, क्षमा यज्ञ है, क्षमा वेद है, क्षमा शास्त्र है। जो ऐसा समझता है, वह क्षमाशील हो जाता है। क्षमा ब्रह्म है, क्षमा सत्य है, क्षमा भूत है, क्षमा भविष्य है, क्षमा तप है, क्षमा शौच है। क्षमा ने ही पूरे जगत को धारण कर रखा है। क्षमा तेजस्वी मनुष्यों का तेज है, क्षमा तपस्वियों का ब्रह्म, सत्यवादियों का सत्य है। क्षमा ही यज्ञ और शम (शांति) है। समझदार को सदैव क्षमा का ही आधार लेना चाहिए। जब मनुष्य सब कुछ सह लेता है, तब वह ब्रह्म हो जाता है–*यदा हि क्षमते सर्वं ब्रह्म सम्पद्यते तदा* (वन॰ ,)। क्षमा करने वाले लोक में सुख पाते तथा परलोक में परम गति पाते हैं। क्षमावानों के लिए ही लोक-परलोक सुखद होते हैं। द्रौपदी! क्षमा की यह गाथा सुन कर संतुष्ट हो जाओ, क्रोध न करो। भीष्म, कृष्ण, विदुर, कृप, सोमदत्त, युयुत्सु, अश्वत्थामा, वेदव्यास सब शांति ही चाहेंगे। यदि सब लोग राजा धृतराष्ट्र को शांति के लिए प्रेरित करते रहेंगे, तो वे हमें हमारा राज्य दे देंगे। यदि नहीं देंगे तो लोभ के कारण नष्ट हो जायंगे। भरतवंशियों के लिए यह विकट समय आ गया है। सुयोधन कभी भी क्षमा भाव नहीं अपनायेगा, क्योंकि वह उसके योग्य नहीं है। मैं तो क्षमा ही अपनाऊंगा (अध्याय –)।

. द्रौपदी का दैववाद से हटकर कर्म करने पर बल

द्रौपदी ने युधिष्ठिर से कहा–राजन! उस धाता और विधाता को नमस्कार है जिसने आपकी बुद्धि में मोह उत्पन्न कर दिया, जिससे आप अपने पिता-पितामहों के उज्ज्वल आचरण छोड़कर उलटा चल रहे हैं। कर्म प्रधान है, मोक्ष का लोभ व्यर्थ है। धर्म, कोमलता, क्षमा, विनय और दया से कोई मनुष्य धन एवं ऐश्वर्य नहीं पा सकता। आप धर्म-धर्म रटते हैं। मैं मानती हूं कि आप अपने भाइयों को और मुझे छोड़ सकते हैं, परंतु धर्म को नहीं छोड़ सकते। आप कहते हैं कि यदि धर्म की रक्षा की जाय तो धर्म हमारी रक्षा करेगा; परंतु मैं देखती हूं कि धर्म आपकी रक्षा नहीं कर रहा है।

आप अपने से छोटे का भी कभी अपमान नहीं करते, फिर बड़े का अपमान कब कर सकते हैं? आप ब्राह्मणों को पूजते हैं, यज्ञ करते हैं, दान देते हैं तथा और भी धर्म के नाम पर बहुत कुछ करते हैं; परंतु मुझे आश्चर्य है कि आपकी धर्म-बुद्धि उस समय कहां चली गयी जब आपने जुआ खेल जैसा घृणित काम किया जिसमें राज्य-धन तो दावं पर लगा ही दिये, भाइयों को, खुद को और मुझे भी दावं पर लगा दिये और सब कुछ हारकर वन में भटक रहे हैं। आप सरल, कोमल, उदार, लज्जाशील और सत्यवादी हैं। मुझे दुख है कि आपकी